||श्रीः||

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

355

नैषध-प्रश्नोत्तरात्मक

(हिन्दी-प्रश्नोत्तरी)

लेखिका

अर्चना झा

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

परीक्षापयोगी प्रश्नोत्तरात्मक पुस्तकें

(संस्कृत भाषा में)

अभिधावृत्तिमातृका-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
अलङ्कारशास्त्रस्येतिहासः । परमेश्वरदीन पाण्डेय
उत्तररामचरितादर्श । डॉ. रमाशंकर मिश्र
कर्पूरमंजरी-दीपिका । गौरीनाथ मिश्र 'भास्कर'
कादम्बरी-कला-प्रकाशः । डॉ. नरेश झा
कादम्बरी-सोपानम् । शिवप्रसाद द्विवेदी
काव्यप्रकाश-रहस्यम् । श्रीरामजीलाल शर्मा
काव्यमीमांसा-दीपिका । वेदव्यास शुक्ल (१-५ अध्याय)
काव्यशास्त्रस्येतिहास-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
काव्यालङ्कारसूत्रवृत्तेः-आलोकः । (तृतीयाधिकरण प्रश्नोत्तरी) । डॉ. नरेश झा
किरातार्जुनीय-रहस्यम् । डॉ. कृष्णदेव प्रसाद । १-२ सर्ग, ३-६ सर्ग
कुमारसम्भवम्-रहस्यम् । श्री रामप्रसाद त्रिपाठी । १-२ सर्ग
कुवलयानन्दालोकः । डॉ. नरेश झा
चन्द्रकलानाटिका-रहस्यम् । परमेश्वरदीन पाण्डेय
चन्द्रालोक-रहस्यम् । मानवल्ली तथा बेताल
चम्पूरामायण सोपानम् । डॉ शिवप्रसाद द्विवेदी
तर्कभाषा-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
तर्कसंग्रह-रहस्यम् । श्रीकीर्त्यानन्द झा
दशकुमारचरित-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
ध्वन्यालोक-प्रकाशिका । श्री राजेन्द्रप्रसाद कोठ्यारी
नलचम्पू-रहस्यम् । पं. परमेश्वरदीन पाण्डेय
नाटयशास्त्र-प्रश्नोत्तरी । १-७ अध्याय; १७-२० अध्याय
नैषधीयचरित-प्रश्नोत्तरी । मिश्र एवं द्विवेदी । १-५ सर्ग; १०-१३ सर्ग
परमलघुमञ्जूषा-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
परिभाषेन्दुशेखर-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
पाणिनीयशिक्षा-सोपानम् । डॉ. बालगोविन्द झा
प्रतिमानाटक-रहस्यम् । डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी
प्रबन्यसङ्ग्रहः (व्याकरणाचार्य निबन्ध) । डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
भट्टिकाव्य-दर्पणः । स्वामी प्रज्ञान भिक्षु । १-४ सर्ग, ५-८ सर्ग
भट्टिकाव्यालोकः । डॉ. रमाशङ्कर मिश्र । १४-१७ सर्ग, १८-२२ सर्ग
भारतीयसंस्कृति-सोपानम् । आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी
मध्यसिद्धान्तकौमुदी-चन्द्रिका । आचार्य विजयमित्रशास्त्री (१-४ खण्ड) सम्पूर्ण

॥श्रीः॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

355

नैषध-प्रश्नोत्तरात्मक

(हिन्दी-प्रश्नोत्तरी)

लेखिका

अर्चना झा

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

प्रकाशक

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)

के. 37/117, गोपालमन्दिर लेन

पो. बा. नं. 1129, वाराणसी 221001

दूरभाषः 335263, 333371

प्रथम संस्करण 2003 ई.

मूल्य 30.00

अन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बनारस स्टेट बैंक भवन के पीछे)

पो. बा. नं. 1069, वाराणसी 221001

दूरभाषः 320404

*

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू. ए. जवाहरनगर, बंगलो रोड

पो. बा. नं. 2113

दिल्ली 110007

दूरभाषः 23956391

मुद्रक

ए. के. लिथोग्राफर

दिल्ली

विषयानुक्रमणिका

व्याख्या

प्रथमसर्ग

द्वितीयसर्ग

तृतीयसर्ग

*

प्रश्नोत्तरात्मक भाग

(1) प्रश्न—संस्कृत साहित्य में 'बृहत्त्रयी' का परिचय देते हुए महाकाव्यकारों का परिचय दीजिए।

उत्तर—साहित्य की समस्त विधाओं के मूलस्रोत वैदिक वाङ्मय में ही प्राप्त होते हैं। महाकाव्य परम्परा का बीज भी सर्वप्रथम हमें ऋग्वेद के रोचक आख्यानों में परिलक्षित होता है। ऋग्वेद के प्रथम मंडल के बत्तीसवें सूक्त में इन्द्र और वृत्र के रोचक आख्यान को आधुनिक विद्वानों ने महाकाव्यों का मूलस्रोत माना है। पाश्चात्य विचारक विन्टरनिट्ज ने भी इन आख्यान काव्यों को महाकाव्यों की उत्पत्ति का स्रोत माना है। यतः इनकी कथावस्तु वीरों और राजाओं के पराक्रम की गाथा है।

लौकिक साहित्य में रामायण तथा महाभारत को प्रारंभिक महाकाव्य माना जाता है। महर्षि वाल्मीकिं आदिकवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं तथा उनकी कृति रामायण आदिकाव्य के रूप में गौरवान्वित है।

संस्कृत महाकाव्यों के अन्तर्गत तीन महाकाव्यों का उल्लेख प्राप्त होता है। महाकवि भारवि कृत 'किरातार्जुनीयम्', महाकवि माघ रचित 'शिशुपालवधम्' तथा महाकवि श्रीहर्ष कृत 'नैषधीयचरितम्'। इन तीनों महाकाव्यों को ही 'बृहत्त्रयी' के नाम से जाना जाता है। इन तीनों की पृथक् विवेचना निम्न है।

(क) महाकवि भारवि

महाकवि भारवि संस्कृत साहित्य गगन के देदीप्यमान नक्षत्र हैं। इनका काल महाकवि कालिदास के बाद का माना जाता है। ऐहोल के 634 ई. के शिलालेख से चालुक्यवंशी राजा पुलकेशिन द्वितीय की प्रशस्ति में भारवि नाम का स्पष्ट उल्लेख मिलता है और 'अवन्ति सुन्दरी कथा' के आधार पर भारवि का दक्षिण भारत का निवासी होना सिद्ध होता है। ये पुलकेशिन द्वितीय के अनुज विष्णुवर्धन के सभापंडित थे। इन साक्ष्यों के आधार पर इनका काल 600 ई. के आस-पास माना जा सकता है। इनकी एकमात्र रचना 'किरातार्जुनीयम्' ही प्राप्त है। यह एकमात्र काव्य ही उन्हें संस्कृत महाकाव्यकारों की अग्रिम पंक्ति में प्रतिष्ठित करने में सक्षम है।

महाभारत के प्रसंग से एक छोटी सी घटना 'अर्जुन की तपस्या तथा शिव

द्वारा किरात वेश धारण कर जंगली सुअर हेतु युद्ध तथा शंकर द्वारा पाशुपत अस्त्र का दान' का वर्णन है । इस घटना को कविवर भारवि ने 18 सर्गों में वर्णित कर अपनी अद्वितीय प्रतिभा का परिचय दिया है । इस महाकाव्य का प्रधान रस वीर है तथा शृङ्गार एवं अन्य रस गौण रूप से वर्णित हैं । भारवि के अर्थगौरव गुण के यहाँ प्रचुर उदाहरण उपलब्ध होते हैं ।

(ख) महाकवि माघ

बृहत्त्रयी के अन्तर्गत 'किरातार्जुनीयम्' के पश्चात् 'शिशुपालवध' महाकाव्य आता है । महाकवि माघ तथा उनकी रचना को संस्कृत साहित्य में प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । महाकवि माघ का समय सातवीं शती. का उत्तरार्द्ध माना जाता है । भोजप्रबन्ध की किंवदन्तियों में इन्हें भोज का परम मित्र कहा गया है ।

'शिशुपालवधम्' महाकाव्य की कथा महाभारताश्रित है । यह महाकाव्य 20 सर्गों वाला है । इस महाकाव्य में शिशुपाल के वध की कथा है । कृष्ण युधिष्ठिर के यज्ञ में जाते हैं उनकी अग्रपूजा होती देख शिशुपाल रह नहीं पाता है और कृष्ण को गालियाँ देने लगता है । कृष्ण शिशुपाल में युद्ध होता है तथा अन्ततः शिशुपाल मृत्यु को प्राप्त हो जाता है ।

महाकवि माघ की कीर्त्तिपताका फहराने वाली यह कृति अद्भुत है । इसमें महाकवि माघ की अद्वितीय काव्य प्रतिभा प्रत्येक श्लोक में दिखाई देती है । माघ के गुणों का वर्णन करते हुए कहा गया है—

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम् ।
नैषधेः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः ॥

माघ के काव्य में उपमा, अर्थगौरव तथा पदलालित्य, ये तीनों गुण एक साथ पाये जाते हैं । लोक में यह कथा प्रचलित है कि भारवि के यशः सूर्य को अस्त करने के लिए ही माघ ने शिशुपालवध की रचना की ।

(ग) श्रीहर्ष

महाकाव्य परंम्परा में श्रीहर्ष का 'नैषधीयचरित' संस्कृत साहित्य का अन्तिम महत्त्वपूर्ण महाकाव्य है । श्रीहर्ष माघ के परवर्ती थे । इनका समय बारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध माना जाता है । ये कन्नौज के राजा विजयचन्द्र या जयचन्द्र के समयकालीन थे ।

श्रीहर्ष प्रकाण्ड विद्वान थे। उन्होंने कई ग्रन्थों की रचना की है। जिनमें 'नैषधीयचरित' सर्वाधिक प्रमुख तथा लोकप्रिय है। यह 22 सर्गों वाला अद्भुत महाकाव्य है। इसकी कथा भी महाभारताश्रित नलोपख्यान है। इसमें नल तथा दमयन्ती के प्रेम विवाह आदि का वर्णन प्राप्त होता है।

'नैषधीयचरित' अनेक दृष्टियों से संस्कृत साहित्य का एक अनुपम काव्य है। इसकी विशेषताओं से भारवि तथा माघ की चमक भी प्रभाहीन जान पड़ती है तभी संस्कृत साहित्य में प्रसिद्ध उक्ति है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः ? क्व च भरविः ॥

संस्कृत साहित्य में 'बृहत्त्रयी' के अन्तर्गत उपरोक्त महाकाव्य आते हैं।

(2) प्रश्न—संस्कृत साहित्य में महाकाव्य का लक्षण देते हुए 'नैषधीयचरितम्' को महाकाव्य सिद्ध कीजिए।

अथवा

सिद्ध कीजिए 'नैषधीयचरित' एक उच्चकोटि का महाकाव्य है।

उत्तर—संस्कृत साहित्य की अनेक विधाएँ हैं। नाट्य साहित्य, गद्यसाहित्य, महाकाव्य, दूतकाव्य, गीतिकाव्य आदि। साहित्य की समस्त विधाएँ मनुष्य को आनन्द देने वाली तथा ज्ञानदायिनी हैं। इन सभी में महाकाव्यों की लोकप्रियता सर्वाधिक है। विश्व प्रतिष्ठित रामायण तथा महाभारत भी महाकाव्य हैं जिनकी एक-एक घटना के आधार पर परवर्ती महाकवियों ने अत्यन्त सुन्दर महाकाव्य रचे हैं। इसी कारण इन्हें उपजीव्य काव्य कहते हैं। ये ऐतिहासिक महाकाव्य हैं।

संस्कृत साहित्य की समस्त विधाओं के बीज हमें आदिग्रन्थ ऋग्वेद में ही प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद के कतिपय सूक्तों में महाकाव्य का प्रारंभिक रूप प्राप्त होता है पुनः ब्राह्मण-ग्रन्थों में यह पल्लवित रूप में दृष्टिगोचर होता है।

लौकिक साहित्य में महाकाव्यों की लम्बी शृंखला प्राप्त होती है—आदिकवि वाल्मीकि कृत रामायण, वेदव्यास कृत महाभारत, कालिदास कृत रघुवंश, माघ कृत शिशुपालवध, भारविकृत किरातार्जुनीयम्, श्रीहर्ष कृत नैषधीयचरितम् आदि। कालांतर में महाकाव्यों के लिए लक्षण बताये गये। महाकाव्य के लक्षण भामह, दण्डी, मम्मट तथा आचार्य विश्वनाथ आदि कवियों ने निर्धारित किये हैं।

यद्यपि महाकाव्य के लक्षण अनेक विद्वानों द्वारा निर्दिष्ट किये गये हैं, परन्तु आचार्य विश्वनाथ ने 'साहित्यदर्पण' में महाकाव्य का विशद् और सांगोपांग विवेचन किया है। उनके मतानुसार महाकाव्य का लक्षण निम्न हैं—

सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायक सुरः ॥
सद्वंश क्षत्रियो वापि धीरोदात्तः गुणान्वितः ।
एकवंशभवाभूपाः कुलजा बहवोऽपि वा ॥
शृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रस इष्यते ।
अङ्गानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटक सन्धयः ॥
इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयम् ।
चत्वारस्तस्य वर्गाः स्युस्तेष्वेकं च फलं भवेत् ।
आदौ नमस्क्रियाशीर्वा वस्तुनिर्देश एव वा ।
चिन्निन्दा खलादीनां सतां च गुणकीर्त्तनम् ॥

अर्थात् जिसमें सर्गों का निबन्धन हो वह महाकाव्य कहलाता है। सर्गों की संख्या कम से कम आठ होती है। महाकाव्य का नायक कोई देवता अथवा धीरोदात्त गुणों वाला क्षत्रिय, उच्चकुलोत्पन्न होना चाहिए। एक ही वंश में उत्पन्न अनेक राजा भी इसके नायक हो सकते हैं। शृङ्गार, वीर अथवा शान्त में से कोई एक रस अङ्गी अर्थात् प्रधान होना चाहिए। नाटक की सारी संधियाँ (मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श, उपसंहृति) होनी चाहिए। इसका कथानक ऐतिहासिक होना चाहिए अथवा सज्जन व्यक्ति सम्बन्ध रखने वाला होना चाहिए। महाकाव्य में (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) में से कोई एक फल रूप में होना चाहिए। इसके प्रारंभ में नमस्कार आशीर्वचन तथा मुख्य कथावस्तु का निर्देश होता है। कहीं खलों की निन्दा और सज्जनों का गुण वर्णन होता है —

एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः ।
नाति स्वल्पा नातिदीर्घाः सर्गा अष्टाधिका इह ॥
नानावृत्तमयः क्वापि सर्गः कश्चन दृश्यते ।
सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथायाः सूचनं भवेत् ॥
सन्ध्या सूर्येन्दुरजनीप्रदोषध्वान्तवासराः ।
प्रातर्मध्याह्नमृगयाशैलर्तुवनसागराः ॥

संयोगविप्रलम्भौ च मुनिस्वर्गपुराध्वराः ।
रणप्रयाणोपयममन्त्रपुत्रोदयादयः ॥
वर्णनीया यथायोगं साङ्गोपाङ्गा अमी इह ।
कवेर्वृत्तस्य वा नाम्ना नायकस्येतरस्य वा ॥
नामास्य सर्गोपादेयकथया सर्गनाम तु ।

महाकाव्य में सर्गों की संख्या आठ से अधिक होनी चाहिए और इन सर्गों का आकार न बहुत छोटा न बहुत बड़ा होना चाहिए । प्रत्येक सर्ग में एक छन्द का ही प्रयोग होना चाहिए किन्तु सर्ग का अन्तिम पद्य भिन्न छन्द का होना चाहिए । कहीं-कहीं किसी सर्ग में विविध छन्दों का प्रयोग भी हो सकता है । प्रत्येक सर्ग के अन्त में आगे आने वाली कथा की सूचना होनी चाहिए । इसमें सन्ध्या, सूर्य, चन्द्रमा, रात्रि, प्रदोष, अन्धकार, दिन, प्रातःकाल, मध्याह्न, मृगया, पर्वत, ऋतु, वन, समुद्र, संयोग, वियोग, मुनि, स्वर्ग, नगर, यज्ञ, संग्राम, विवाह, मन्त्र, पुत्र तथा अभ्युदय आदि का यथासम्भव साङ्गोपाङ्ग वर्णन होना चाहिए । महाकाव्य का नामकरण कवि, पात्र या चरित्र के नाम से या नायक के नाम से होना चाहिए । सर्गों के नाम सर्ग की कथावस्तु के आधार पर होना चाहिए ।

श्रीहर्ष रचित 'नैषधचरित महाकाव्यम्' संस्कृत साहित्य में उच्चकोटि के महाकाव्यों के समूह में आता है । इसकी प्रंशसा अनेक आधुनिक आलोचकों ने भी किया है । यथा—

उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ।

नैषध महाकाव्य एक आदर्श सफल महाकाव्य है । इसमें महाकाव्य के सभी लक्षण यथास्थान समाहित हैं । यह महाकाव्य 22 सर्गों में विभक्त है । इसके नायक क्षत्रिय, उच्च कुलोत्पन्न राजा हैं । प्रसंग तथा कथावस्तु के अनुसार इसमें सज्जनस्तुति, खलनिंदा आदि सभी का वर्णन प्राप्त है । महाकाव्य की कथावस्तु निम्न है :

प्रथम सर्ग में राजा नल का चरित, धर्माचरण, प्रताप, यश, ऐश्वर्य का परिचय दिया गया है । विदर्भ देश के राजा भीम की पुत्री अनुपमा सौन्दर्यशालिनी थी जो इस महाकाव्य की नायिका है नल तथा दमयन्ती दोनों एक दूसरे के रूप, गुण, ऐश्वर्य के विषय में दूतों बन्दी-जनों द्वारा सुनकर एक दूसरे पर आसक्त हो गये । कामार्त्त राजा नल शान्ति प्राप्ति हेतु वन गये वहाँ एक हंस मिला । हंस

दमयन्ती के समीप जाकर नल के ऐश्वर्य का वर्णन करता है तथा दमयन्ती का प्रेम नल में जानकर प्रसन्न होकर राजा को सूचना देता है । तब स्वयंवर आयोजन में देवता भी दमयन्ती से परिणय की इच्छा लेकर आते हैं । दमयन्ती नल के गले में वरमाला डाल देती है । इस अवसर पर चार देवताओं तथा नल के रूप की समानता का अद्वितीय वर्णन प्राप्त होता है । तदनन्तर विवाहोत्सव होता है और उसके बाद नल दमयन्ती की दिनचर्या, चन्द्रोदय, सूर्योदय आदि का चित्रण प्रस्तुत किया गया है ।

'नैषधमहाकाव्य' में महाकाव्य के सभी लक्षण विद्यमान हैं । इसके नायक नल धीरोदात्त सद्वंश तथा क्षत्रियकुलोत्पन्न हैं । इसका प्रधान रस शृङ्गार है तथा करुण, वीर, हास्य आदि गौण रस हैं जिनका प्रयोग प्रसंगानुसार अत्यन्त कुशलता से किया गया है । प्रत्येक सर्ग में प्रायः एक ही छन्द का प्रयोग हुआ है सर्गान्त में छन्द परिवर्तन है । प्रातः, सायं, रात्रि, चन्द्रमा, विवाह, प्रकृति सौन्दर्य आदि का वर्णन भी प्राप्त है । नाटक की समस्त सन्धियों मुख, निर्वहण, आदि का निर्वाह सम्यक् रूप से किया है । इसकी कथावस्तु ऐतिहासिक है । काम की प्राप्ति इसका फल है । नायक के नाम के आधार पर इसका शीर्षक 'नैषधमहाकाव्यम्' सार्थक है । वस्तुतः यह एक उच्चकोटि का महाकाव्य है । पाश्चात्य विद्वान् डॉ. कीथ ने भी कहा है— 'नैषध संस्कृत साहित्य का सबसे बड़ा महाकाव्य है ।'

(3) प्रश्न—नैषध प्रणेता श्रीहर्ष के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय दीजिए ।

उत्तर—भारतीय संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । महाकवि हर्ष का कृतित्व दीर्घकालपर्यन्त संस्कृत प्रेमियों को आह्लादित करता रहेगा। इसकी गंणना 'बृहत्त्रयी' में तीसरे स्थान पर की जाती है किन्तु विद्वत् समुदाय में यह सर्वाधिक लोकप्रिय है ।

श्रीहर्ष का व्यक्तित्व—नैषध प्रणेता श्रीहर्ष का जीवनवृत्त अन्य कवियों के समान अंधकार में नहीं है । यतः इन्होंने स्वयं अपना परिचय 'नैषधीयचरित' के प्रत्येक सर्ग के अन्तिम श्लोक में अंकित किया है । प्रत्येक श्लोक में अपने माता-पिता आश्रयदाता एवं कृतियों का उल्लेख किया है । इसके अतिरिक्त सन् 1348 ई. में राजशेखर सूरि ने अपने 'प्रबन्ध कोष' में श्रीहर्ष के संक्षिप्त जीवन का परिचय दिया है । इन वर्णनों के आधार पर श्रीहर्ष के माता-पिता का परिचय निम्न है—

श्रीहर्षः कविराजराजिमुकुटाऽलङ्कारहीरः सुतम् ।
श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम् ॥

प्रकृत श्लोक के आधार पर श्रीहर्ष के पिता का नाम 'श्रीहीर' तथा माता का नाम 'मामल्लदेवी' था।

एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार काव्यप्रकाशकार मम्मट श्रीहर्ष के मामा थे। परन्तु मम्मट तथा श्रीहर्ष के समय में लगभग 200 वर्षों का अन्तर प्राप्त होता है। अतः इसके प्रामाणिकता में सन्देह उत्पन्न होता है।

श्रीहर्ष का काल—महाकवि श्रीहर्ष का जीवनवृत्त संस्कृत साहित्य के अन्य कवियों के समान पूर्णतया अंधकार में नहीं है क्योंकि स्वयं ही उन्होंने अपना परिचय अनेकत्र वर्णित किया है तथापि इनके काल निर्धारण में आधुनिक विद्वानों में मतैक्य नहीं अपितु विभिन्नता है।

आधुनिक विद्वानों में डॉ. बुलर ने महाकवि श्रीहर्ष का समय निश्चित करने का प्रयास किया था। उन्होंने जैन कवि राजशेखरसूरि कृत 'प्रबन्धकोष' के आधार पर श्रीहर्ष को राजा जयन्तचन्द्र अथवा जयचन्द्र का आश्रित कवि माना है। इनका समय 1168 ई. से 1194 ई. तक है। इस आधार पर इनका समय ईसा की 12वीं शताब्दी का उत्तरार्ध मान लेना उचित होगा।

'नैषधचरित' के प्राचीन टीकाकार चाण्डुपण्डित ने अपनी टीका 'दीपिका' में नैषध के विषय में कहा है—'काव्यं नवं नैषधम्'। इसके साथ ही उन्होंने नैषध की विद्याधर रचित टीका का उल्लेख किया है। इनका समय 1353 अर्थात् 1296 माना गया है। अतः नैषध इससे पूर्व लिखा गया होगा। इस आधार पर भी नैषध तथा श्रीहर्ष का समय 12 वीं शताब्दी का उत्तरार्ध ही सिद्ध होता है।

गंगेश उपाध्याय ने अपने ग्रन्थ 'तत्त्वचिन्तामणि में श्रीहर्ष कृति 'खण्डनखण्डखाद्य' का खण्डन किया है। श्री उपाध्याय का समय 1200 ई. माना जाता है। इस काल तक नैषध कृति प्रसिद्ध हो चुकी थी। इस आधार पर भी यही प्रमाणित होता है कि श्रीहर्ष का काल 1125 ई. से 1180 ई. के मध्य रहा होगा। उपर्युक्त साक्ष्यों के आधार पर श्रीहर्ष का समय 12वीं शताब्दी का उत्तरार्ध मानना ही न्यायसंगत प्रतीत होता है।

श्रीहर्ष का निवास स्थान—महाकवि श्रीहर्ष के निवास स्थान के सम्बन्ध में

भी विद्वानों में मतैक्यता का अभाव है। कतिपय विद्वान् उन्हें कन्नौज का, कतिपय वाराणसी का, तो कतिपय उन्हें बंगाल निवासी मानते हैं।

श्रीहर्ष ने स्वयं को कन्नौज के राजा के आश्रित रहने का वर्णन स्वयं किया है—

ताम्बूलद्वयमासानं च लभते यः कान्यकुब्जेश्वरा-
द्यः साक्षात्कुरुते समाधिषु परं ब्रह्म प्रमोदाऽर्णवम्।
यत्काव्यं मधुवर्षि, धर्षितपरास्तर्केषु यस्योक्तयः
श्रीश्रीहर्षकवेः कृतिः कृतिमुदे तस्याऽभ्युदीयादियम्॥ 22/153।

कुछ विद्वान् इन्हें वाराणसी अर्थात् काशी के राजा जयन्तचन्द्र को इनका आश्रयदाता मानते हैं। परन्तु इस तथ्य की सिद्धि में प्रमाणों का अभाव है।

कुछ विद्वान् इन्हें कश्मीर निवासी मानते हैं। नैषध के 16वें सर्ग में प्राप्त उक्ति 'कश्मीरैर्भहति चतुर्दशतयीं विद्यां वदभ्द्भिर्महाकाव्ये।'—16/130 के आधार पर इन्हें कश्मीर निवासी माना जाता है परन्तु किंवदंती है कि श्रीहर्ष कान्यकुब्जेश्वर की आज्ञा से कश्मीर के महाराजा से अपने ग्रन्थ की निर्दोषता का प्रमाणपत्र लाये थे। इस घटना से श्रीहर्ष कश्मीर में परदेसी सिद्ध होते हैं वहाँ के निवासी नहीं।

कुछ विद्वान् श्रीहर्ष को गौडदेशीय मानते हैं। प्रख्यात मैथिल कवि विद्यापति ने अपने ग्रंथ 'पुरुषपरीक्षा' में श्रीहर्ष को गौडदेश निवासी बताया है। 'राजशेखर सूरि' ने भी अपने 'हरिहरप्रबन्ध' में लिखा है—

श्रीहर्षवंशे हरिहरः गौडदेशयः।

इसी प्रकार नैषध के आन्तरिक प्रमाणों से कुछ विद्वानों ने इन्हें बंगप्रदेश निवासी बताया है।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर श्रीहर्ष का निवास स्थान निश्चित करना अत्यन्त कठिन है। यह भी माना जा सकता है कि श्रीहर्ष कई राजाओं के आश्रित रहे होंगे।

श्रीहर्ष सम्पूर्ण शास्त्रों के ज्ञाता, अत्यन्त मेधावी तथा अद्वितीय प्रतिभा सम्पन्न थे। वे उच्चकोटि के दार्शनिक तथा भक्त थे। कर्मवाद तथा भाग्यवाद में विश्वास रखने वाले थे। अपौरुषेय ग्रंथ वेद के प्रति उनकी पूर्ण आस्था थी। उनमें देशभक्ति की भावना भरी थी। जीवन के अनेक पहलुओं तथा समस्याओं पर भी उन्होंने

विचारपूर्ण निर्णय दिया है। दान, धर्म, भक्ति, दर्शन सिद्धान्तों, जीवनमूल्यों आदि विषयों पर उन्होंने महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त किये हैं।

श्रीहर्ष की कृतियाँ—आधुनिक विद्वान श्री राजशेखर सूरि ने माना है कि श्रीहर्ष ने शताधिक ग्रन्थों की रचना की। किन्तु 10 ग्रन्थों के विषय में ही प्रमाण मिलते हैं। नैषधचरित ग्रन्थ में ही उन्होंने अपने अन्य आठ ग्रन्थों का उल्लेख किया है। ये प्रमुख ग्रन्थ निम्नलिखित हैं—

1. नैषधीयचरितम्
2. स्थैर्यविचारप्रकरण
3. विजयप्रशस्ति
4. खण्डनखण्डखाद्य
5. गौडीर्वीकुल प्रशस्ति
6. अर्णव वर्णन
7. छिन्द प्रशस्ति
8. शिवशक्तिसिद्धि
9. नवसाहसाङ्कचरितचम्पू
10. ईश्वराभिसन्धि

उपरोक्त ग्रन्थों में से भी दो ग्रन्थ मात्र उपलब्ध होते हैं अन्य विलुप्त हो चुके हैं।

संस्कृत काव्य परम्परा में नैषधीयचरित को बृहत्त्रयी के रूप में अद्वितीय प्रतिष्ठा प्राप्त है। इस ग्रन्थ में निषध देश के राजा नल तथा विदर्भ देश की राजकुमारी दमयन्ती की कथा वर्णित है। महाभारत में वर्णित नलोपाख्यान ही इस महाकाव्य की कथावस्तु है। बाईस सर्गों में निबद्ध यह ग्रन्थ महाकाव्य की कसौटी पर पूर्णतया सफल है। इसमें अनेक स्थलों पर श्रीहर्ष ने अपनी अद्वितीय प्रतिभा का परिचय दिया है। इस सम्बन्ध में संस्कृत जगत् में उक्ति प्रसिद्ध है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदित नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारवि? ॥

श्रीहर्ष कृत द्वितीय ग्रन्थ 'खण्डनखण्डखाद्य' दार्शनिक ग्रन्थों में प्रमुख है। यह वेदान्त का अमूल्य ग्रन्थरत्न है। ये अद्वैतवाद के पोषक हैं। इसमें न्यायप्रक्रिया के

आधार पर न्याय सिद्धान्तों का खण्डन तथा वेदान्त सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है । प्रकृत ग्रन्थ श्रीहर्ष के दार्शनिक ज्ञान तथा कवित्व प्रतिभा का परिचायक है ।

(4) प्रश्न—'नैषधीयचरितम्' के आधार पर श्रीहर्ष की रचना शैली का वर्णन कीजिए ।

उत्तर—श्रीहर्ष संस्कृत साहित्य के प्रतिष्ठित महाकवियों में प्रमुख हैं । संस्कृत महाकाव्यों के अन्तर्गत तीन महाकाव्यों को 'बृहत्त्रयी' में स्थान प्राप्त है, वे हैं—महाकवि भारवि कृत 'किरातार्जुनीयम्', माघ कृत 'शिशुपालवधम्' तथा महाकवि श्रीहर्ष कृत 'नैषधीयचरितम्' । इन तीनों महाकाव्यों में 'नैषधीयचरितम्' महाकाव्य को सर्वोत्कृष्ट स्थान प्राप्त है ।

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदित नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारवि? ॥

संस्कृत साहित्य में प्रायः कवियों का परिचय प्राप्त नहीं होता परन्तु श्रीहर्ष ने नैषध के प्रत्येक सर्गान्त में अपना जीवनवृत्त वर्णित किया है—

श्रीहर्ष कविराजराजिमुकुटाऽलङ्कारहीरः सुतम् ।
श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम् ॥

इन्होंने दस ग्रन्थों की रचना की जिनमें से दो आज उपलब्ध हैं 'नैषधीयचरित महाकाव्यम्' तथा 'खण्डनखण्डखाद्य' । इन दो काव्यों ने ही श्रीहर्ष की प्रखर मेधा शक्ति तथा अद्वितीय कवित्व प्रतिभा को सिद्ध कर दिया है । राजशेखर ने श्रीहर्ष का समय 1168 ई. से 1194 ई. तक बताया है । डॉ. बूलर तथा अन्य आधुनिक विद्वानों ने इनका समय 12 वीं शताब्दी उत्तरार्द्ध माना है ।

'नैषध' संस्कृत साहित्य सागर का अमूल्य रत्न है । इसकी प्रभा श्रीहर्ष के वैदुष्य एवं काव्य-कौशल को आलेकित करने में सक्षम है । नैषध में भाषा सौन्दर्य, सौष्ठव, पदलालित्य, स्वरमाधुर्य, ओज तथा प्रासादगुण मनोहारि प्रकृति चित्रण एक साथ देखने को मिलते हैं ।

शैली—श्रीहर्ष की काव्यशैली मुख्यतया वैदर्भी है परन्तु यत्र-तत्र गौडीरीति का प्रयोग भी मिलता है । वैदर्भी रीति वह है जो माधुर्य व्यञ्जक वर्णों से पूर्ण असमस्त अथवा स्वल्प समास युक्त ललित रचना से पूर्ण होती है ।

माधुर्यव्यञ्जकैवर्णै रचना ललितात्मिका ।
आवृत्तिरल्प वृत्तिर्वा वैदर्भी रीतिरिष्यते ।।

श्रीहर्ष स्वयं ही वैदर्भी रीति की प्रशंसा करते हैं—'धन्यासि वैदर्भी गुणैरुदारैः'। कहीं-कहीं उनकी वैदर्भी शैली युक्त भाषा महाकवि कालिदास की भाषा के सदृश ललितामयी मनोहारि हो जाती है, यथा प्रथम सर्ग में —

तवाऽपि हा! हा विरहात् क्षुधाकुलाः कुलाय कूलेषु विलुठ्य तेषु ते ।
चिरेण लब्ध बहुभिर्मनोरथैर्गताः क्षणेनाऽस्फुटितेक्षणा मम ।।

हस नल द्वारा पकड़े जाने पर जो विलाप करता है वह हृदय को द्रवित करने वाला है । महाकवि श्रीहर्ष जितनी सुन्दरता से वैदर्भी रीति का प्रयोग करते हैं उतनी ही कलात्मकता से गौडी शैली का भी प्रयोग करते हैं । यथा—

सुवर्णदण्डैकसितातपत्रितज्वलत्प्रतापावलिकीर्त्तिमण्डलः ।

अर्थात् जिस राजा नल ने अपने देदीप्यमान तेज की पंक्ति तथा कीर्ति समूह को सुवर्णदण्ड और धवलछत्र बनाया । पुनः एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है—

स्फुरद्धनुर्निस्वनतद्धनाशुगप्रगल्भवृष्टिव्ययितस्य सङ्गरे ।

अर्थात् युद्ध में चमकते हुए धनुष की टंकार वाले नल के सघन वाणों की प्रबल वर्षा से बुझते हुए । श्रीहर्ष की शैली में शब्दालङ्कारों का प्रयोग प्रचुरता से प्राप्त होता है । यमक, अनुप्रास तथा वीप्सा तो उनके प्रिय अलङ्कार हैं । इन शब्दालङ्कारों के मनोहारि प्रयोग के कारण विशेषण दिया गया 'नैषधेपदलालित्यम्' वस्तुतः श्रीहर्ष के महाकाव्य में पदों की माधुर्यता दर्शनीय है यथा—

अहो ! अहोभिर्महिमा हिमागमेऽप्यतिप्रपेदे प्रति तां स्मराऽर्दिताम् ।
तपर्तुपूर्तावपि मेदसां भरा विभावरीभिर्विभराबभूविरे ।।

भाषा—महाकवि श्रीहर्ष के सम्मुख कालिदास, भारवि, माघ आदि महाकवियों की सरस, सुबोध, गम्भीरा, भाषा का उदाहरण प्रस्तुत था । श्रीहर्ष इन सभी से पूर्णतया प्रभावित थे । अतः उन्होंने भी अपने महाकाव्य की भाषा में प्राञ्जलता, सरसता, सततप्रवाह, सुबोधता का पूर्णतया ध्यान रखा है । यद्यपि श्रीहर्ष की भाषा में कहीं-कहीं गंभीरता का पुट भी प्राप्त होता किन्तु वह महाकवि के वैदुष्य और उसकी ज्ञान प्रखरता का परिचायक है । सरल भाषा का उदाहरण द्रष्टव्य है—

धन्याऽसि वैदर्भि! गुणैरुदारैर्यया समाकृष्यत नैषधोऽपि ।

पुनः एक अन्य उदाहरण भी द्रष्टव्य है'जिसकी सरलता, भावप्रवणता अद्वितीय है। प्रथम सर्ग में हंस विलाप करते हुए कहता है—

मदेकपुत्रा जननी जराऽऽतुरा, नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी।
गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दयन्नहो! विधे! त्वां करुणा रुणद्धि नो॥

श्रीहर्ष ने अपनी भाषा में अनेक स्थानों पर मुहावरों का भी प्रयोग किया है तो कहीं-कहीं अनेक अप्रचलित शब्दों का भी प्रयोग किया है।

उनका शब्द भंडार, अद्वितीय, दर्शनीय तथा अध्येताओं को चमत्कृत करने वाला है। नैषध के 13वें सर्ग में पाँच नलों के वर्णन के समय उनका श्लेष पराकाष्ठा पर पहुँच गया है। निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि श्रीहर्ष की भाषा में प्रौढ़ता के साथ परिष्कार भी है। कठिन से कठिन भावों की अभिव्यक्ति में उनकी वाणी पूर्णतया समर्थ है। प्रसंगानुकूल शब्द प्रयोग उनके अद्वितीय कवित्व शक्ति का परिचायक है।

भावपक्ष—श्रीहर्ष में भावाभिव्यक्ति की अपूर्व क्षमता है। कहीं मनोहर सुकुमार भाव है तो कहीं उनकी कल्पनाएँ अत्यन्त गम्भीरता से परिपूर्ण हैं। अभिव्यक्ति के साथ उनका सौन्दर्य पूर्णरूपेण निखरा हुआ है। चन्द्रमा के अन्दर विद्यमान कलङ्क के सम्बन्ध में कवि की कल्पना द्रष्टव्य है यथा—

यदस्य यात्रासु बलोद्धतं रजः स्फुरत्प्रतापानलधूममञ्जिम।
तदेव गत्वा पतितं सुधाऽम्बुधौ दधाति पङ्कीभवदङ्कतां विधौ॥

अर्थात् राजा नल की विजय यात्राओं के समय जो धूल उड़कर समुद्र में गिर गयी थी वही कीचड़ बनकर समुद्र से उत्पन्न चन्द्रमा में कलङ्क के रूप में दिखाई पड़ती है।

पुनः एक अन्य श्लोक नैषध के प्रथम सर्ग का द्रष्टव्य है—

हरेर्यदक्रामि पदैककेन खं पदैश्चतुर्भिः क्रमणेऽपि तस्य न।
त्रपा हरीणामिति नम्रिताऽऽननैर्न्यवर्ति तैरर्धनभः कृतक्रमैः॥

अर्थात् राजा नल के घोड़े आकाश में अपने पैर को उठाकर लज्जित होकर इस कारण लौट आये कि विष्णु ने एक ही पैर से सम्पूर्ण आकाश को माप लिया था तो हम चार पैर से उसे क्यों मापें ?

वस्तुतः श्रीहर्ष की भाषा भावाभिव्यक्ति में सक्षम है। वीर, करुण, शृङ्गार तथा अन्य सभी भावों की अभिव्यक्ति में अद्भुत कुशलता, सम्पूर्ण महाकाव्य में प्राप्त होती है।

रसाभिव्यक्ति—'नैषध' महाकाव्य का अंगीरस शृंगार है। वीर करुण तथा हास्य रसों को भी अंगीरसों के रूप में स्वीकार किया गया है। शृंगार के विभिन्न दशाओं के चित्रण में श्रीहर्ष की कवित्व-प्रतिभा चरम सीमा को प्राप्त करती है। नल दमयन्ती के परिणयोपरान्त प्रथम मिलन का विस्तृत वर्णन अद्वितीय है। नल के विवाह-काल में सखियों की छेड़छाड़ को भी प्रस्तुत किया गया है। नायिका का नखशिख वर्णन अत्यन्त मनोरम तथा हृदयहारी है। अंग रस हास्यरस का भी यथेष्ट वर्णन प्राप्त होता है। करुण रस का चित्रण प्रथम सर्ग में हंस विलाप के प्रसंग में प्राप्त होता है। यथा—

मुहूर्तमात्रं भवनिन्दया दयासखाः सखायः स्रवदश्रवो मम।
निवृत्तिमेष्यन्ति परं दुरुत्तरस्त्वयैव मातः! सुतशोकसागरः॥

अथवा नल के द्वारा पकड़े जाने पर भाग्य को उलाहना देता हुआ कहता है—

मदेकपुत्रा जननी जराऽऽतुरा, नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी।
गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दयन्नहो! विधे! त्वां करुणा रुणद्धि नो॥

प्रसंगानुसार वीर रस का वर्णन भी 'नैषध' में पर्याप्त मिलता है।

पात्र-चित्रण में भी श्रीहर्ष की तूलिका अत्यन्त दक्ष है। नल तथा दमयन्ती के चरित्र को उन्होंने अत्यन्त सुन्दर उपमाओं से चित्रित किया है। नल धीरोदात्त नायक हैं। सौन्दर्य गुणों में अद्वितीय है। दमयन्ती अत्यन्त सुन्दरी है। सौन्दर्य के साथ-साथ पाँच नलों के पहचान में अपनी बुद्धि का प्रयोग कर देवताओं को चमत्कृत कर देती है।

'नैषधमहाकाव्य' में श्रीहर्ष ने अलङ्कारों का प्रचुर प्रयोग किया है। शब्दालङ्कार तथा अर्थालङ्कार का भी अद्भुत प्रयोग सर्वत्र परिलक्षित होता है। पदलालित्य एवं माधुर्य की दृष्टि से कवि को अनुप्रास तथा यमक विशेष प्रिय है। अनुप्रास का एक उदाहरण—

तव वर्त्मनि वर्ततां शिवं, पुनरस्तु त्वरितं समागमः ।
अपिसाधय साधयेप्सितं, स्मरणीयाः समये वयं वयः ॥

प्रसंगानुसार उत्प्रेक्षा अतिशयोक्ति स्वभावोक्ति श्लेषादि का भी प्रयोग प्राप्त होता है । छन्द प्रयोग में भी नैषध महाकाव्य अद्वितीय है । इसमें 19 छन्दों का प्रयोग किया जाता है । इन्द्रवज्रा तथा उपजाति के प्रयोग को देखकर यह अनुमान लगाया जाता है कि ये महाकवि हर्ष के प्रिय छन्द हैं । वंशस्थ, मन्दाक्रान्त, शिखरिणी, स्रग्धरा, आदि छन्द भी बहुलशः प्राप्त होते हैं ।

निष्कर्षतः श्रीहर्ष ही पदरचना, भावविन्यास, कल्पनाचातुर्य और प्रकृति-चित्रण आदि सभी प्रयोगों में सिद्धहस्त हैं । प्रणय पक्ष का ऐसा समर्थ और हृदयग्राह्य चित्रण करने में कुछेक महाकाव्यकार ही सफल हुए हैं ।

(5) प्रश्न—'नैषधंविद्वदौषधम्' उक्ति को श्रीहर्ष के महाकाव्य नैषध के आधार पर चरितार्थ करें ।

उत्तर—महाकवि श्रीहर्ष ने 'नैषधमहाकाव्य' में उच्चकोटि के कवित्व दार्शनिकत्व शक्ति का अद्भुत परिचय दिया है । अनेक शास्त्रीय सिद्धान्तों के वर्णन से क्लिष्ट एवं श्लिष्ट प्रयोगों के चित्रण कर अपने पाण्डित्य प्रदर्शन द्वारा नैषध महाकाव्य रूपी गागर में सागर भर दिया है । अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण नैषध महाकाव्य को विद्वानों के लिए औषध अथवा रसायन माना गया है ।

इस महाकाव्य के अनुशीलन के आधार पर श्रीहर्ष को विविध शास्त्रों का ज्ञाता माना जा सकता है । प्रकृत महाकाव्य में श्रीहर्ष ने श्लेष युक्त प्रयोगों के अतिरिक्त व्याकरणशास्त्र, न्याय, वैशेषिक, सांख्ययोग, वेदान्त, मीमांसा, चार्वाक, बौद्ध, जैन आदि दर्शनों के कठिन सिद्धान्तों का भी यत्र-तत्र वर्णन किया हैं ।

संस्कृत साहित्य में श्रीहर्ष को छोड़कर शायद ही कोई अन्य कवि ऐसा हो जिसमें कवित्व तथा दार्शनिकत्व पाण्डित्य का इस प्रकार का मञ्जुल मिश्रण हो । सभी दर्शनों के विषय में उनका ज्ञान वस्तुतः अद्भुत था ।

तभी तो नैषध अनुशीलन के अनन्तर विद्वत् समुदाय यह कह उठता है अथवा कहने को बाध्य हो जाता है 'नैषधं विद्वदौषधम्' ।

अलङ्कारों का चमत्कृत प्रयोग, दार्शनिक सिद्धान्तों का वर्णन अक्षय शब्द भण्डार से युक्त इस महाकाव्य का अध्ययन वही समुचित विधि से कर सकता है जो

वस्तुतः सभी का ज्ञाता है। अन्यथा साधारण बुद्धि वाले पाठकों के लिए यह महाकाव्य आत्मसात् करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। इनके महाकाव्य में कलापक्ष, भावपक्ष से अधिक सबलरूप में प्राप्त होता है यथा—

उभयी प्रकृतिः कामे सज्जेदिति मुनेर्मनः।
अपवर्गे तृतीयेति भणतः पाणिनेरपि॥

अर्थात् मुक्ति या मोक्ष के लिए प्रयत्न न तो पुरुष वर्ग को करना चाहिए न स्त्री वर्ग को, अपितु उसके अधिकारी तो तृतीय प्रकृति अर्थात् नपुंसक ही है। इसे सिद्ध करने के लिए श्रीहर्ष ने 'अपवर्गे तृतीया' के सूत्र रचयिता महर्षि पाणिनि का उल्लेख कर दिया है।

वैशेषिक दर्शन को अंधकार निरूपक दर्शन मानकर उसकी चुटकी लेते हैं—

औलूकमाहुः खलु दर्शनं तत् क्षमं तमस्त्वनिरुपणाय।

न्यायदर्शन प्रणेता गौतम को इसलिए 'गोतम' अर्थात् पक्का बैल मानते हैं क्योंकि वह मुक्त दशा में चेतन प्राणियों को विशेष गुण से हीन बताकर उनकी पत्थर के समान निर्जीव स्थिति को स्वीकार करते हैं। यथा—

मुक्तये यः शिलात्वाय शास्त्रमूचे सचेतसाम्।
गोतमं तमवेक्ष्यैव यथा वित्थ तथैव सः॥

श्रीहर्ष का अपना मत अद्वैत वेदान्त का है और इसका उन्होंने स्थान-स्थान पर व्यंग्य रूप से तथा प्रत्यक्ष रूप से प्रतिपादन किया है। सत् असत् सद्सत् तथा सद्सद् विलक्षण से विलक्षण अद्वैत जो चतुष्ट्य से भिन्न होने के कारण पाँचवीं कक्षा में आता है —

साप्तुं प्रयच्छति न पक्षचतुष्टये तां तल्लाभशंसिनि न पञ्चमकोटिमात्रे।
श्रद्धां दधे निषधराड्विमतौ मतानामद्वैततत्त्व इव सत्यतरेऽपि लोकः॥

इस पद्य से वेदान्त प्रतिपादित अद्वैत तत्त्व की सत्ता प्रमाणिता होती है। नैषध के दसवें सर्ग में सरस्वती के स्वरूप का वर्णन करते हुए उन्होंने एक ही श्लोक में बौद्धदर्शन की तीन शाखाओं का वर्णन प्रस्तुत कर विद्वत्समुदाय में अपना उत्कृष्ट स्थान बना लिया है। ज्योतिष से भी वे पूर्णतया परिचित हैं तभी तो कहते हैं —

अजस्रमभ्यासमुपेयुषा समं मुदैव देवः कविना बुधेन च।

महाकवि श्रीहर्ष कहीं-कहीं गम्भीर शास्त्र चर्चा करते हुए अन्य मतावलम्बियों की चुटकी भी ले लेते हैं। वैयाकरण की यह चुटकी मनोरंजक है यथा—

भुङ्क्तुं प्रभुर्व्याकरणस्य दर्पं पदप्रयोगाध्वनि लोक एषः।
शशो यदस्यास्ति शशी ततोऽयमेवं मृगोऽस्यास्ति मृगोति नोक्तः॥

श्लेषमूलक वर्णनों में भी महाकवि श्रीहर्ष का कोई विकल्प नहीं है। पाँच नलों के वर्णन में उन्होंनें अद्भुत श्लेष चातुर्य का परिचय दिया है यथा—

देवःपतिर्विदुषि! नैष धराजगत्या निर्णीयते न कुमु न व्रियते भवत्या।
नायं नलः खलु तवातिमहानलाभो यद्येनमुज्झसि वरः कतरः परस्ते॥

आधुनिक विद्वान् श्रीबलदेव उपाध्याय का कथन है—'नैषधकाव्य एक विशाल सुसज्जित प्रासाद के समान है, जिसमें सभी वस्तुएँ यथास्थान सुचारु रूप से अलंकृत कर रखी गई हैं तथा जिसके चुनाव तथा रमणीयता में सर्वत्र सुसंस्कृति तथा नागरिकता झलकती है। वर्तमान आलोचक को नैषध में दुरूहता या क्लिष्टता अथवा कृत्रिमता का गन्ध भले आये परन्तु पण्डित तथा विद्वान् आलोचक नैषधकाव्य की पाण्डित्यमयी उपमाओं पर, रमणीय रूपकों पर तथा हृदयावर्जक श्लेषों के ऊपर सदा रीझता रहा है तथा भविष्य में रीझता रहेगा। महाकवि भारवि का अर्थगौरव, माघ, की शब्द चयनता तथा श्रीहर्ष के विद्वत्पूर्ण वर्णनों की सरसधारा युग-युगान्तर तक प्रवाहित होती रहेगी तथा विद्वानों में यह उक्ति प्रचलित रहेगी 'नैषधं विद्वदौषधम्'।

(6) प्रश्न—'उदिते नैषधेभानौ क्व माघः? क्व च भारवि?' उक्ति की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—संस्कृत साहित्य में 'बृहत्त्रयी' को विशेष गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। 'बृहत्त्रयी' के अर्न्तगत तीन महाकाव्य आते हैं—किरातार्जुनीयम्, शिशुपालवधम् तथा नैषधीयचरितम्। किरातार्जुनीयम् के रचयिता महाकवि भारवि संस्कृत साहित्याकाश में सूर्य के समान शोभायमान हैं तो माघ कृत शिशुपालवधम् भी काव्यकला की दृष्टि से अद्भुत है। नैषधीयचरितम् तो कदाचित् विलक्षण कवित्व प्रतिभा की पराकाष्ठा है। प्रकृत उक्ति की समीक्षा के लिए तीनों महाकवियों के महाकाव्य की विशेषता का विवेचन आवश्यक है।

महाकवि भारवि की कृति एकमात्र 'किरातार्जुनीयम्' ही वर्तमान काल में उपलब्ध

है। यह महाकाव्य शास्त्रीय दृष्टि से सर्वाधिक सफल है। महाकवि भारवि ने महाभारत के वन पर्व के एक छोटे व सरल उपाख्यान पर 'किरातार्जुनीयम्' की रचना की है। यह 18 सर्गों में विभक्त है। महाकवि भारवि कृत इस महाकाव्य का मुख्य रस वीर है। इनका शब्द प्रयोग, भावाभिव्यक्ति रसाभिव्यक्ति अद्वितीय है। लघुसमास, अलङ्कारों का सुन्दर प्रयोग, भावों की प्रौढ़ता आदि के कारण ही उक्ति प्रचलित हो गई 'भारवेरर्थगौरवम्'।

महाकवि भारवि द्वारा लिखित कुछ पंक्तियाँ तो आज अपनी सार्थकता के कारण लोकोक्तियाँ बन चुकी हैं, यथा—

हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः।
न हि प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः॥

महाकवि भारवि ने अपने काव्य में व्याकरण ज्ञान की प्रौढ़ता भी प्रदर्शित की है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण 'किरातार्जुनीयम्' को त्रयी के अन्तर्गत प्रथम स्थान पर रखा गया।

'बृहत्त्रयी' के अन्तर्गत द्वितीय स्थान प्राप्त है महाकवि माघ कृत अद्भुत महाकाव्य 'शिशुपालवधम्' को। भारवि के सदृश ही यह एकमात्र काव्य ही माघ की कीर्त्ति को प्रतिभासित करने में समर्थ है। यह महाकाव्य 20 सर्गों में निबद्ध है तथा कथा महाभारत पर आश्रित है।

महाकवि माघ का समय परवर्ती विद्वानों ने नौवीं शताब्दी के मध्य माना है। महाकवि माघ ने 'शिशुपालवध' के द्वितीय सर्ग में 'कोशिका वृत्ति' तथा "न्यास' नामक दो व्याकरण ग्रन्थों का उल्लेख किया है। इनका रचनाकाल 650 ई. माना जाता है इससे सिद्ध होता है कि महाकवि माघ का समय सातवीं शती के पश्चात् का ही है। शिशुपालवध को उत्कृष्ट महाकाव्य माना जाता है। महाकवि माघ के काव्य की शैली चित्ताकर्षक है। स्थान-स्थान पर उनके सर्वांगीण शास्त्र के ज्ञान का अद्भुत परिचय प्राप्त होता है। उनका शब्द भण्डार अपूर्व है। भावों का मनोरम वर्णन, भाषा में गम्भीरता और सहजता दर्शनीय है। आधुनिक विद्वानों ने कालिदास के समान उपमा, भारवि के अर्थगौरव तथा दण्डी के समान पदलालित्य का एक सन्निवेश माघ कृत 'शिशुपालवध' में पाया है तभी यह उक्ति प्रचलित हो गई—

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
नैषधे पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः॥

श्रीहर्ष कृत नैषधीयचरित

महाकवि माघ के अनन्तर महाकवि श्रीहर्ष को भी संस्कृत साहित्य में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है । श्रीहर्ष कृत नैषधीयचरितम् की गणना बृहत्त्रयी के अन्तर्गत आती है।

श्रीहर्ष कृत ग्रन्थ का कथानक महाभारताश्रित है । राजा नल तथा दमयन्ती के प्रेम विवाह आदि का वर्णन है । श्रीहर्ष का वैदुष्य अद्भुत है । ये सम्पूर्ण शास्त्रों के महान् ज्ञाता अत्यन्त मेधावी, चमत्कारी कवित्व प्रतिभायुक्त थे ।

महाकवि श्रीहर्ष का काल 12वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध माना जाता है । इन्होंने अपने माता-पिता का परिचय भी स्वयं दिया है । नैषध के प्रत्येक सर्ग के अन्त में कहा है—

श्रीहर्ष कविराजराजिमुकुटाऽलङ्कारहीरः सुतम् ।
श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम् ।।

श्रीहर्ष की कृति 'नैषधीयचरितम्' को विद्वत् समुदाय में अत्यन्त प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस महाकाव्य में वेद, वेदाङ्ग, ज्योतिष, आयुर्वेद, धनुर्वेद आदि शास्त्रों का प्रसंग कई स्थलों पर वर्णित है । नैषध के टीकाकार विद्याधर ने उनकी बहुज्ञता का परिचय देते हुए लिखा है—

अष्टौ व्याकरणानि तर्कनिवहः साहित्यसारो नयो
वेदार्थावगतिः पुराणपठितिर्यस्यान्य शास्त्राण्यपि ।
नित्यं स्युः स्फुरितार्थदीपविहताज्ञानान्धकाराण्यसौ
व्याख्यातुं प्रभवव्यमुं सुविषमं सर्ग सुधीः कोविदः ।।

श्रीहर्ष कृत 'नैषधीयचरितम्' में 22 सर्ग है तथा यह महाकाव्य की कसौटी पर पूर्णतया सफल है । इस काव्य में महाकवि ने अपने अद्भुत काव्य कौशल, सृजनात्मक प्रतिभा का परिचय दिया है । भावों का सुन्दर वर्णन अलङ्कारों का अद्भुत प्रयोग वैदर्भी शैली मनोरम प्रकृति चित्रण, सभी का एक साथ वर्णन इस महाकाव्य में प्राप्त होता है । इस काव्य में भाषा की प्राञ्जलता, सरसता, इसकी प्रवाहता, गुणों की व्यापकता पांठकों को पूर्णतया प्रभावित करती रहती है ।

इन्हीं विशेषताओं के कारण 'नैषधीयचरितम्' काव्य की लोकप्रियता का सूर्य भारवि तथा माघ की लोकप्रियता को धूमिल करने वाला है । इसलिए यह उक्ति प्रचलित हो गई—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

अर्थात् भारवि की कान्ति माघ के उदय के पहले ही शोभित होती है परन्तु नैषधरूपी सूर्य के उदय होने पर कहाँ माघ ? और कहाँ भारवि ?

यह उक्ति श्रीहर्ष को भारवि तथा माघ से श्रेष्ठ सिद्ध करती है ।

(7) प्रश्न—'नैषधीयचरितम्' महाकाव्य के आधार पर नल का चरित्र-चित्रण कीजिए ।

उत्तर—'नैषधमहाकाव्य' संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्नों में प्रमुख है । 22 सर्गों में निबद्ध यह महाकाव्य सफल महाकाव्य है । इसमें भावों का मनोहारिचित्र, भाषालालित्य, मनोरम प्रकृति चित्रण, आदर्श पात्र-चित्रण, उत्कृष्ट अलङ्कार प्रयोग एक साथ प्राप्त होते हैं । श्रीहर्ष का प्रकाण्ड पाण्डित्य एवं गंभीर ज्ञान कवित्व की चरम सीमा का परिचायक है ।

नैषध में श्रीहर्ष ने पात्रों के चरित्र-चित्रण में अद्वितीय सूझ-बूझ का परिचय दिया है । कवि ने अपनी विलक्षण कल्पनाओं तथा उपमाओं के द्वारा पात्रों को आदर्श नायक नायिका बनाया है । इस महाकाव्य के प्रमुख पात्र राजा नल तथा दमयन्ती हैं ।

राजा नल विदर्भ देश के राजा हैं । महाभारत के नलोपाख्यान में प्राप्त नल का चरित्र साधारण है परन्तु महाकवि हर्ष की कल्पनाओं ने विदर्भ नरेश को अत्यन्त उदात्त चरित्र वाला बना डाला है । नैषध के नरेश आदर्श राजा, कर्त्तव्यनिष्ठ, अजेय, शत्रुओं का मर्दन करने वाले हैं ।

धीरोदात्त नायक—महाराजा नल धीरोदात्त नायक हैं । धीरोदात्त नायक का लक्षण देते हुए आचार्य विश्वनाथ ने कहा है—साहित्यशास्त्र के आचार्यों द्वारा निर्धारित नायक के प्रायः सभी गुण उनमें विद्यमान हैं । नैषध के प्रथम सर्ग के प्रथम श्लोक में ही श्रीहर्ष ने नल की कथा को अमृत की अपेक्षा सुस्वादु माना है—

निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथां तथाऽऽद्रियन्ते न बुधाः सुधामपि ।

राजा नल के वैदुष्य का वर्णन करते हुए श्रीहर्ष ने कहा है—

अधीतिबोधाचरणप्रचारणैर्दशाश्चतस्रः प्रणयन्नुपाधिभिः ।
चतुर्दशत्वं कृतवान्कुतः स्वयं न वेद्मि विद्यासु चतुर्दशस्वयम् ॥

राजा नल श्रेष्ठ गुणों से युक्त क्षत्रियवंशी उच्च कुलोत्पन्न राजा है । उनकी वैदुष्य, कलाप्रियता दयालुता आदि मानवीय गुण कूट-कूट कर भरे हुए हैं । वह धर्मनिष्ठ, कर्त्तव्यपरायण, पुण्यात्मा, शूरवीर, त्यागी, दानी आदर्श राजा हैं । श्रीहर्ष ने नल के रूप में भारतीय पुरुष के आदर्शतम रूप को चित्रित किया है ।

आदर्श राजा—श्रीहर्ष ने राजा नल को आदर्श राजा के रूप में चित्रित किया है । राजा नल को श्री हर्ष ने 'दिगीशवृंन्दांशविभूतिः' अर्थात् इन्द्र आदि दिक्पालों के समूह के अंशों से उत्पन्न तथा आठों दिशाओं का स्वामी बताया है । राजा के आस्तिक विचारों के फलस्वरूप उनके राज्य में सभी निवासी धार्मिक आचरण तप आदि किया करते हैं । यहाँ तक कि अधर्म भी अपने एक चरण की छोटी अँगुली से भूमि का स्पर्श करते हुए तप में संलग्न था ।

महाकवि श्रीहर्ष के शब्दों में—

पदैश्चतुर्भिः सुकृते स्थिरीकृते कृतेऽमुना के न तपः प्रपेदिरे ?
भुवं यदेकाङ्घ्रिकनिष्ठया स्पृशन्दधावधर्मोऽपि कृशस्तपस्विताम् ॥

राजा नल का प्रताप दूर-दूर तक फैला हुआ है । उनके बाणों की वृष्टि से राजा नल के सौ से भी अधिक शत्रुओं की प्रतापरूपी अग्नि बुझ गई है । राजा नल शत्रुविहीन होकर निर्द्वन्द्वता के साथ राज्य का संचालन करते थे । नल के प्रताप का वर्णन करते हुए महाकवि श्रीहर्ष का यह श्लोक द्रष्टव्य है—

यदस्य यात्रासु बलोद्धतं रजः स्फुरत्प्रतापाऽनलधूममञ्जिम ।
तदेव गत्वा पतितं सुधाऽम्बुधौ दधाति पङ्कीभवदङ्कतां विधौ ॥

राजा नल चक्रवर्ती सम्राट हैं । उनके राज्य में सर्वत्र सुख शान्ति एवं समृद्धि व्याप्त थी ।

दयालु तथा मानवीय संवेदनाओं से युक्त—राजा नल वीर, प्रतापी होने के साथ-साथ मानवीय गुणों से भी परिपूर्ण हैं । प्रथम सर्ग में हंस विलाप के वर्णन में हंस की करुण कथा को सुनकर द्रवित होकर बिना किसी शर्त के ही छोड़ देते हैं यह कहते हुए—

रूपमदर्शिधृतोऽसि यदर्थं गच्छ यथेच्छमथेत्यभिधाय ।

हंस के परिवार की दशा सुन राजा के नेत्रों में अश्रु भर आते हैं । राजा नल

विनम्र तथा आदर्श प्रेमी भी हैं। उनका प्रेम संयत है यद्यपि कामदेव उन्हें विरहानल से दग्ध कर रहा है तथापि वे दमयन्ती के पिता से उसकी याचना न करते हुए अपने स्वाभिमान का परिचय देते हैं।

कर्त्तव्यपारायण—महाराजा नल कर्त्तव्यपरायण व्यक्ति हैं। देवों के दौव्यरूप में विद्यमान राजा नल अनेक गुणों से युक्त होकर स्वयंवर से पहले आते हैं। इन्द्र आदि देवताओं के कहने पर दूत बनकर दमयन्ती के सम्मुख जाते हैं। स्वयं दमयन्ती के प्रेम में आसक्त होने पर तथा दमयन्ती के अपने प्रति प्रेम को जानते हुए भी वे अपने मनोभावों को छुपाकर कर्त्तव्य को प्रमुखता देते हैं। देवताओं द्वारा दमयन्ती के निवास स्थल पर जाते हुए देवताओं के आशीर्वाद से वे लुप्त हैं तथापि किसी से टकराने पर अथवा किसी युक्ती के अंगों को देखकर शालीनतावश लज्जा अनुभव करते हैं। इससे नल के चरित्र की उदात्तता प्रकट होती है। राजा नल अपने दूत कर्म को ईमानदारीपूर्वक निभाते हैं। राजा नल निर्भीक कर्त्तव्यपरायण पवित्र हृदययुक्त भावुक आदर्श प्रेमी हैं।

नल की गणना महापुरुषों की श्रेणी में गिने जाने योग्य है। महाकवि श्रीहर्ष ने भी हंस से यही कहलवाया है—

क्रियेत चेत्साधुविभक्तिचिन्ता व्यक्तिस्तदा सा प्रथमाऽभिधेया।
या स्वौजसां साधयितुं विलासैस्तावत्क्षमानामपदं बहु स्यात्॥

अर्थात् यदि महापुरुषों का वर्गीकरण किया जाय तो राजा नल ही प्रथम स्थान पर गिने जायेंगे कि जिन्होंने अपने पराक्रम के वैभव से असंख्य शत्रु राजाओं से पदों को अपने अधीन करने में समर्थता प्राप्त की थी।

वस्तुतः महाराजा नल भारत के पुरुष स्वरूप के आदर्श रूप हैं। उनके जीवन में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों का सुन्दर सामञ्जस्य सर्वत्र दिखाई पड़ता है।

(8) प्रश्न—'नैषधीयचरितम्' महाकाव्य के आधार पर श्रीहर्ष की अलङ्कार योजना का परिचय दीजिए।

उत्तर—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष का स्थान सर्वोपरि है। इनकी अनेकों कृतियाँ परन्तु महाकवि श्रीहर्ष कृत 'नैषधीयचरितम्' ग्रन्थ ही इनकी विद्वता तथा प्रतिभा से संस्कृत विद्वानों को चमत्कृत कर देने वाला है। महाभारत में वर्णित

'नलोपाख्यान' पर आश्रित इस महाकाव्य की भाषा, भाव-चित्रण, चरित्र-चित्रण सहित सभी पक्ष प्रशंसनीय हैं। महाकवि श्रीहर्ष ने अपने अगाध पाण्डित्य, प्रशंसनीय काव्य प्रतिभा, शब्दों का अक्षय कोष, अद्भुत अलङ्कार योजना, वैदर्भी शैली रचित इस कृति को अद्वितीय बना डाला है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण ही इसकी गणना 'बृहत्त्रयी' के अन्तर्गत होती है।

प्रकृत महाकाव्य में श्रीहर्ष ने अलङ्कारों का प्रचुरता से प्रयोग किया है। वस्तुतः अलङ्कार ही महाकाव्य के सौन्दर्य को बढ़ाने वाले होते हैं। तभी तो आचार्य मम्मट ने अलङ्कार को परिभाषित करते हुए कहा है—

उपकुर्वन्ति तं सन्तं येऽङ्गद्वारेण जातुचित्।
हारादिवदलङ्कारास्तेऽनुप्रासोपमादयः॥

महाकवि श्रीहर्ष ने अपने इस महाकाव्य में शब्दालङ्कार तथा अर्थालङ्कार दोनों का प्रचुर प्रयोग किया है। आधुनिक विद्वान् सुरेन्द्र देव शास्त्री महाकवि श्रीहर्ष के अलङ्कार प्रयोग की विशेषता का वर्णन करते हुए कहते हैं—'नैषध' में अलङ्कारों का प्रयोग अर्थ की पुष्टि की दृष्टि से ही किया है। काव्य की रसधारा प्रवाह में विरोध उत्पन्न करने वाले 'मुरज' सर्वतोभद्र और चित्रबन्ध इत्यादि अलङ्कारों का प्रयोग उन्होंने नहीं किया है।

श्रीहर्ष की शैली वैदर्भी है। अपनी शैली को पदलालित्य तथा माधुर्य की दृष्टि से उन्होंने अनुप्रास तथा यमक शब्दालङ्कारों का बहुशः प्रयोग किया है। इन्हीं विशेषताओं के कारण संस्कृत साहित्य में श्रीहर्ष की प्रशंसा करते हुए कहा गया है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः?॥

श्रीहर्ष ने अलङ्कार आदि के प्रयोगों में दर्शन और व्याकरण से उदाहरण लेकर अनोखी सूझबूझ का परिचय दिया है। श्लेष अलङ्कार के प्रयोग से पाठक विस्मित हो उठते हैं। अनुप्रास की छटा सर्वत्र दर्शनीय है, यथा दूसरे सर्ग का यह श्लोक—

तव वर्त्मनि वर्ततां शिवं, पुनरस्तु त्वरितं समागमः।
अपिसाधय साधयेप्सितं, स्मरणीयाः समये वयं वयः॥

महाकवि श्रीहर्ष पदे पदे अपने अलङ्कारों से अलंकृत प्रयोग से महाकाव्य की रसधारा प्रवाह बनाये रखने में सक्षम हैं। यमक का अनेक रूपों में प्रयोग 'नैषध' में प्राप्त होता है। निम्न श्लोक द्रष्टव्य है। इसमें कामदेव की स्तुति की गई है—

लोकेशकेशवशिवानपि यश्चकार शृङ्गारसान्तरभृशान्तरशान्त भावान्।
पञ्चेन्द्रियाणि जगतानिषुपञ्चकेन सङ्क्षोभयन्वितनुतां वितनुर्मुदं वः॥

उत्प्रेक्षा अलङ्कार का भी श्रीहर्ष ने प्रचुर प्रयोग किया है। उत्प्रेक्षा अलङ्कार के ये उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

अजस्त्रभूमीतटकुट्टनोदगतैरुपास्यमानं चरणेषु रेणुभिः।
रयप्रकर्षाऽध्ययनाऽथमागतैर्जनस्य चेतोभिरिवाऽणिमाङ्कितैः॥

अर्थात् राजा नल के घोड़े का वेग अणु परिमाण वाले मनुष्यों के मनों से भी अधिक तीव्र था। उत्प्रेक्षा अलङ्कार का एक अन्य श्लोक द्रष्टव्य है—

निलीयते ह्रीविधुरः स्वजैत्रं श्रुत्वा विधुस्तस्य मुखं मुखान्नः।
सूरे समुद्रस्य कदाऽपि पूरे कदाचिद्भ्रभ्रमदभ्रगभे॥

उत्प्रेक्षा अलङ्कार में वह अपनी कल्पनाओं से विद्वद् वर्ग को चमत्कृत कर देते हैं। इसी प्रकार चन्द्रमा के कलङ्क से सम्बन्धित उत्प्रेक्षा द्रष्टव्य है—

यदस्य यात्रासु बलोद्धतं रजः स्फुरत्प्रतापाऽनलधूममञ्जिम।
तदेव गत्वा पतितं सुधाऽम्बुधौ दधाति पङ्कीभवदङ्कतां विधौ॥

श्लेष वर्णन में तो श्रीहर्ष ने प्रखर पाण्डित्य का परिचय दिया है। पाँचों नलों के वर्णन में तो एक श्लोक में पाँच-पाँच अर्थों का समावेश कर कवित्व प्रतिभा की चरम सीमा को व्यक्त कर दिया है। यथा दमयन्ती के स्वयंवर के काल में एक समान पाँच नलों का परिचय कराती हुई सरस्वती दमयन्ती से कहती है—

देवः पतिर्विदुषि ! नैष धराजगत्या निर्णीयते न किमु न व्रयते भवत्या।
नायं नलः खलु तवातिमहानलाभो यद्येनमुज्झसि वरः कतरः पुनस्ते॥

अर्थात् हे विदुषी! दमयन्ती यह तो देवता है, पृथ्वी का स्वामी नल नहीं है क्या तुम इसको जयमाला नहीं पहनाना चाहती हो मैं सरस्वती सच कह रही हूँ। यह

तुम्हारा नल नहीं है। प्रत्युत नल की आत्मा मात्र है यदि तुम इसको छोड़ोगी अर्थात् वरमाला नहीं पहनाओगी तो तुम्हारा पति कौन होगा ?

श्लेष वर्णन में श्रीहर्ष का कोई विकल्प नहीं है। इसके प्रति कवि का विशेष प्रेम सर्वत्र परिचायक होता है। श्लेष के मनोरम विन्यास का उदाहरण द्रष्टव्य है। कोलाहल से परिपूर्ण कुण्डिनपुरी नगरी के वर्णन में श्लेष का अद्भुत सौन्दर्य दर्शनीय है जिससे स्वर्ग तथा उस नग. में कोई असमानता ही नहीं रही है।

स्थितिशालिसमस्तवर्णतां न कथं चित्रमयी विभुर्तु या।
स्वरभेदमुपैतु या कथं कलिताऽनल्पमुखारवा न वा॥

'नैषध काव्य' में शब्दालङ्कार तथा अर्थालङ्कार दोनों का प्रचुर प्रयोग प्राप्त है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, सन्देह और अपह्नुति जैसे अर्थालङ्कारों के प्रयोगों में श्रीहर्ष ने अपनी अनुपम अभिव्यक्ति दी है। उनकी कल्पनायें उपमायें अद्भुत हैं। स्थान-स्थान पर उन्होंने व्याकरण दर्शन एवं पौराणिक विचारों का भी उल्लेख कर डाला है। कहीं-कहीं नाट्यशास्त्र तथा साहित्यशास्त्र से सम्बन्धित उपमानों को भी महाकवि ने अपनाया है। यथा—

यथोह्यमानः खलु भोगभोजिना प्रसह्य वैरोचनिजस्य पत्तनम्।
विदर्भजाया मदनस्तथा मनो नलाऽवरुद्धं वयसैव वेशितः॥

उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलङ्कारों के अतिरिक्त उन्होंने अतिशयोक्ति, विरोधाभास, स्वभावोक्ति, दृष्टान्त आदि अनेक अलङ्कारों का सुन्दर प्रयोग सर्वत्र किया है। अर्थान्तरन्यास के रूप में नितान्त सत्य का स्वरूप उद्घाटन करने वाले सुभाषितों का भी नैषध महाकाव्य में अनेकत्र प्रयोग है, यथा—

त्यजन्त्यसून्शर्म च मानिनो।
वरं त्यजन्ति न त्वेकमयाचितव्रतम्॥

इसी प्रकार एक अन्य श्लोक है—

'क्व भोगमाप्नोति न भाग्यभाग्जनः'।

इन अलङ्कारों के अलङ्कृत प्रयोग को देखकर महाकवि श्रीहर्ष को अलङ्कार सम्राट् कहना भी अनुचित नहीं होगा। अलङ्कारों के प्रयोग में भी उन्होंने समकालीन कवियों को काफी पीछे छोड़ दिया है।

(9) प्रश्न—'नैषधीयचरितम्' काव्य के भावपक्ष का वर्णन करते हुए श्रीहर्ष के कृत्रिम भावों के वर्णन का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। श्रीहर्ष की प्रमुख कृति 'नैषधीयचरितम्' को 'बृहत्त्रयी' में गिना जाता है। 'बृहत्त्रयी' के अन्तर्गत 'नैषध' को सर्वोत्कृष्ट स्थान प्राप्त है। इनकी श्रेष्ठता निम्न श्लोक से सिद्ध होती है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

बारहवीं शती का उत्तरार्द्ध श्रीहर्ष का काल रहा है। ये कान्यकुब्जेश्वर के सभापण्डित थे। श्रीहर्ष राजा विजयचन्द्र अथवा जयचन्द्र नामक कन्नौज के राजा के आश्रित थे। अन्य कवियों के समान श्रीहर्ष का जीवनवृत्त अंधकार में नहीं है यतः इन्होंने 'नैषध' के प्रत्येक सर्ग के अन्त में अपना परिचय स्वयं दिया है—

श्रीहर्षः कविराजिमुकुटाऽलङ्कारहीरः सुतम्।
श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम्॥

अर्थात् इनके पिता का श्रीहरी तथा माता का नाम मामल्लदेवी था। इनके पिता भी असाधारण विद्वान् थे।

इनकी रचना 'नैषधीयचरितम्' महाभारत के नलोपाख्यान पर आधारित है। महाभारत के छोटे से कथानक को इन्होंने अपनी कवित्व प्रतिभा से 22 सर्गों में निबद्ध कर सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य का रचना कर डाला है। श्रीहर्ष ने अपनी लालित्यमयी वैदर्भी शैली प्रवाहमयी सहजा भाषा, अलङ्कार प्रयोग, मनोरमा प्रकृति-चित्रण, भावों की अभिव्यक्ति, अद्भुत कल्पनाओं के सहारे इस महाकाव्य को अद्वितीयत्व प्रदान किया है। श्रीहर्ष की भावाभिव्यक्ति क्षमता अपूर्व है। उनकी सुन्दर कल्पनाओं ने भावों को अत्यधिक मनोहरता तथा सुकुमारता दी है। कहीं-कहीं उनके भाव अत्यन्त गम्भीरता से परिपूर्ण हैं। परन्तु कुशल अभिव्यक्ति के कारण उनका सौन्दर्य पूर्णरूपेण निखर उठा है।

चन्द्रमा में विद्यमान कलङ्क के सम्बन्ध में महाकवि श्रीहर्ष की कल्पना अद्भुत है। राजा नल की विजय यात्राओं के समय जो धूलि उड़कर समुद्र में गिर गयी थी

वही पंक अथवा कीचड़ बनकर समुद्र से उत्पन्न चन्द्रमा में कलङ्क के रूप में दिखलाई पड़ती है।

यदस्य यात्रासु बलोद्धतं रजः स्फुरत्प्रतापाऽनलधूममञ्जिम।
तदेव गत्वा पतितं सुधाऽम्बुधौ दधाति पङ्कीभवदङ्कतां विधौ॥

पुनः प्रथम सर्ग में ही अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है। राजा नल के घोड़े आकाश में अपने पैर के ऊपर लज्जित होकर इसलिए लौट आये हैं कि विष्णु ने (वामनावतार में) एक ही पैर से सम्पूर्ण आकाश को माप लिया था तो हम उसे चार पैरों से क्यों नापें।

हरेर्यदक्रायि पदैककेन खं पदैश्चतुर्भिः क्रमणेऽपि तस्य नः।
त्रपा हरीणामिति नम्रिताऽऽननैर्न्यवर्ति तैरर्धनभः कृतक्रमैः॥

इस प्रकार भावों का मनोवैज्ञानिक चित्रण उनके महाकाव्य में सर्वत्र उपलब्ध होता है।

संसार में निकट भविष्य में होने वाली घटना का मानव हृदय को आभास हो जाता है। इस मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध को महाकवि श्रीहर्ष ने अत्यन्त सरल तथा भावपूर्ण शब्दों में वर्णित किया है।

निश्चय ही संभव होने वाले विषयों के प्रति विधि की इच्छा जिस ओर जाती है विवश होकर मनुष्य का चित्त भी उसी ओर जाता है जैसे आँधी के साथ तिनका उड़कर आता है।

अवश्यभव्येष्वनवग्रहग्रहा यथा दिशा धावति वेधसः स्पृहा।
तृणेन वात्येव तयाऽनुगम्यते जनस्य चित्तेन भृशाऽवशात्मना॥

उनकी कल्पनाएँ अद्भुत हैं परन्तु कहीं-कहीं ये इतनी अधिक हो गई हैं कि प्राकृतिक रूप से पाठकों के हृदय में पच नहीं पाती अपितु वहाँ कृत्रिमता की प्रतीति होने लगती है। यथा चन्द्रमा में नल की सेना के धूल के उड़ने से कलङ्क की प्रतीति। सौन्दर्य में नल द्वारा कामदेव का तिरस्कार आदि वर्णन कृत्रिम अर्थात् बनावटी से प्रतीत होते हैं।

तथापि महाकवि श्रीहर्ष का भावपक्ष सबल रूप में ही पाठकों के समक्ष आता है। उनकी कल्पनाएँ सामान्य पाठकों को विस्मित कर देने वाली हैं।

(10) प्रश्न—'नैषध' महाकाव्य के आधार पर श्रीहर्ष की रसाभिव्यक्ति का वर्णन करें।

उत्तर—श्रीहर्ष संस्कृत साहित्य के मूर्द्धन्य कवि हैं। संस्कृत साहित्य में तीन महाकाव्यों को 'बृहत्त्रयी' में स्थान प्राप्त है—महाकवि भारवि कृत 'किरातार्जुनीयम्', महाकविमाघ कृत 'शिशुपालवधम्' तथा महाकवि श्रीहर्ष कृत 'नैषधीयचरितम्'। इन तीनों महाकाव्यों में 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इसकी पुष्टि निम्न श्लोक से होती है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

'नैषध' उच्चकोटि का महाकाव्य है। इसमें महाकाव्य के सभी गुण विद्यमान हैं। आधुनिक विद्वानों ने 'नैषध' को मुक्त कंठ से सराहा है। इन महाकाव्यों में 'रस' की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। आचार्य विश्वनाथ ने तो 'रसात्मक वाक्यं काव्यं' रसपूर्ण वाक्य को ही काव्य कहा है।

महाकाव्य में शृङ्गार, वीर तथा शान्त में से कोई एक रस प्रधान होना चाहिए तथा अन्य रसों का प्रयोग प्रसंगानुसार होता है। रस की परिभाषा देते हुए भरत मुनि ने लिखा है—

विभावानुभावव्यभिचारिभाव संयोगाद् रसनिष्पत्तिः।

अर्थात् विभाव अनुभाव तथा व्यभिचारी भाव के संयोग से रस की उत्पत्ति होती है।

प्रकृत महाकाव्य का प्रमुख रस शृङ्गार है। परन्तु प्रसंगानुकूल अन्य रसों का कुशलता से समावेश किया गया है। महाकवि श्रीहर्ष ने शृङ्गार रस के वर्णन में भारवि और माघ की परम्परा को आगे बढ़ाया है। शृङ्गार के दोनों पक्षों संयोग तथा विप्रलम्भ का वर्णन विस्तार से किया है। शृङ्गार के आलम्बन विभाव दमयन्ती का नखशिख वर्णन में श्रीहर्ष ने अद्भुत चातुर्य दिखाया है। यथा—

हृतसारमिवेन्दुमण्डलं दमयन्तीवदनाय वेधसा।
कृतमध्यबिलं विलोक्यते धृतगम्भीरखनीखनीलिम ॥

दमयन्ती के अद्भुत सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहा है कि ऐसा प्रतीत

होता है कि दमयन्ती के मुख का निर्माण करने के लिए ब्रह्मा ने चन्द्रमण्डल को निचोड़कर उसका सार भाग निकाल लिया है। इसलिए चन्द्रमण्डल के मध्य में छिद्र हो जाने से उसके पृष्ठ भाग में स्थित आकाश की नीलिमा कलङ्क रूप में दिखाई पड़ती है। यद्यपि नखशिख वर्णन तो प्रायः प्रत्येक महाकवि ने किया है तथापि 'नैषध' जैसा विलासमय नखशिख चित्रण अन्यत्र उपलब्ध न होगा।

दमयन्ती के युवावस्था का वर्णन करते हुए श्रीहर्ष ने कामदेव के तैरने का साधन बना डाला है—

अपि तद्वपुषि प्रसर्पतोर्गमिते कान्तिझरैगाधताम्।
स्मरयौवनयोः खलु द्वयोः प्लवकुम्भौ भवतः कुचावुभौ॥

अर्थात् कान्ति प्रवाह से अगाधता को प्राप्त भी उस (दमयन्ती) के शरीर में बढ़ते हुए कामदेव तथा युवावस्था के लिए (दमयन्ती के विशाल) दोनों स्तन मानों तैरने के घड़े ही हो गये हैं।

विप्रलम्भ शृङ्गार का चित्रण दमयन्ती और राजा नल के पूर्वराग के रूप में चित्रित है। इन वर्णनों में कवि ने अपनी कल्पनाओं का पर्याप्त प्रयोग किया है। कामाग्नि से संतप्त दमयन्ती बार-बार सरस एवं नवीन विकसित कमलों को अपने हृदय पर रखने के लिए ग्रहण करती है, किन्तु अंगस्पर्श होने से पूर्व ही वह विश्वास की तप्त वायु से सूखकर मर्मर हो जाता है और दमयन्ती उसे फेंक देती है—

स्मरहुताशनदीपितया तया बहु मुहुः सरसं सरसीरुहम्।
श्रयितुमर्धपथे कृतमन्तरा श्वसितनिर्मितमर्मरमुज्झितम्॥

शृङ्गार रस के वर्णन में दमयन्ती नल के मिलन का वर्णन करते हुए कहीं-कहीं अश्लीलता की प्रतीति होने लगती है।

शृङ्गार रस के साथ-साथ कवि ने अन्य अंग रसों का भी वर्णन किया है। हास्य रस का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

मुखे निधाय क्रमुकं नलानुगैरथौज्झि पर्णालिरवेक्ष्य वृश्चिकम्।
दमार्पितान्तर्मुखवासनिर्मितं भयाविलैः स्वभ्रमहासिताखिलैः॥

अर्थात् विवाह काल में बरातियों के भोजनान्तर मुखशुद्धि के निमित्त दी जाने वाली सुपारी बिच्छू के आकार की है जिसे देख वे बिच्छू समझकर फेंक देते हैं। यह देख वधूपक्ष के लोग हँस रहे हैं।

करुण रस का चित्रण प्रथम सर्ग में हंस विलाप के समय उपलब्ध हो जाता है। राजा द्वारा पकड़े जाने पर हंस का करुण विलाप पाठकों के हृदय को द्रवित कर देता है—

मदेकपुत्रा जननी जराऽऽतुरा, नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी।
गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दयन्नहो! विधे! त्वां करुणा रुणद्धि नो॥

हंस विलाप का एक अन्य श्लोक भी अत्यन्त मार्मिक है—

ममैव शोकेन विदीर्णवक्षसा त्वयाऽपि चित्राङ्गि! विपद्यते यदि।
तदस्मि दैवेन हतोऽपि हा! हतः स्फुटं यतस्ते शिशवः परासवः॥

वीर रस का वर्णन राजा नल की वीरता के वर्णन में प्राप्त होता है।

उपर्युक्त वर्णनों के आधार पर यह कहा जा सकता है 'नैषध' काव्य में रसाभिव्यक्ति प्रशंसनीय है। महाकवि हर्ष ने प्रसंगों के अनुसार रसाभिव्यक्ति में भी अत्यन्त सिद्धहस्त प्राप्त किया है।

(11) प्रश्न—'नैषध' महाकाव्य के आधार पर श्रीहर्ष के प्रकृति चित्रण का वर्णन कीजिए।

उत्तर—श्रीहर्ष संस्कृत के प्रतिष्ठित कवियों में से एक हैं। इनकी कृति 'नैषधीयचरितम्' संस्कृत साहित्य निधि के सर्वश्रेष्ठ रत्नों में से एक है। महाभारत के एक छोटे से आख्यान को लेकर श्रीहर्ष ने 22 सर्गों वाला अद्भुत महाकाव्य रच डाला। अपने गुणों के कारण ही इसे 'बृहत्त्रयी' के अन्तर्गत प्रमुख स्थान प्राप्त है।

महाकवि श्रीहर्ष का समय भारवि, माघ के पश्चात् आता है। इनका काल बारहवीं शती का उत्तरार्द्ध रहा है। यह कन्नौज के राजा के सभापण्डित थे। संस्कृत कवियों का व्यक्तिगत परिचय बहुलशः प्राप्त नहीं होता है परन्तु हमारा सौभाग्य है कि श्रीहर्ष ने स्वयं अपने माता-पिता का परिचय नैषध के प्रत्येक सर्गान्त में लिखा है। जिससे पश्चातवर्ती अध्ययनकर्त्ताओं को अधिक परेशानी नहीं होती है।

श्रीहर्ष कविराजराजिमुकुटाऽलङ्कारहीरः सुतम्।
श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम्॥

संस्कृत साहित्य में प्रकृति का विशिष्ट स्थान है। सभी काव्यों, नाटकों में प्रकृति के विविध रंगों को शब्दों के माध्यमों से वर्णित कर महाकवियों ने अपनी काव्य प्रतिभा प्रदर्शित की है। श्रीहर्ष भी इन्हीं कवियों में से एक हैं उन्होंने भी प्रकृति के रंगों को अंकित करने में अद्वितीय काव्य-प्रतिभा का परिचय दिया है।

'नैषध' के प्रथम सर्ग में ही महाकवि हर्ष ने प्रकृति का मनोहारि चित्र प्रस्तु किया है। राजा नल पूर्वराग की अवस्था में मन के संताप को कम करने के लि उपवन की ओर जाते हैं। उपवन में पहुँचने पर वृक्ष भी राजा नल का अतिथ्य कर हैं। महाकवि हर्ष के शब्दों में—

फलानि पुष्पाणि च पल्लव करे वयोऽतिपातोद्गतवातवेपिते।
स्थितैः समधाय महर्षिवार्द्धकाद्वने तदातिथ्यमशिक्षि शाखिभिः॥

वृक्षों द्वारा किया गया इस प्रकार का आतिथ्य मानवीकरण का भाव संस्कृ साहित्य सम्राट महाकवि कालिदास के काव्यों में भी मिलता है। एक अन्य दृ द्रष्टव्य है जिसमें वृक्ष पृथ्वी माता को प्रणाम करते हैं—

गता यदुत्सङ्गतले विशालतां द्रुमाः शिरोभिः फलगौरवेण ताम्।
कथं न धात्रीमतिमात्रनामितैः स वन्दमानानभिनन्दति स्म तान्॥

अर्थात् जिनका पालन-पोषण पृथ्वी की गोद में हुआ था ऐसी अपनी माँ पृथ को अपने फलों के आधिक्य से झुके हुए अग्रभागों से युक्त वृक्षों के राजा अभिनन्दन किया। दमयन्ती के प्रेम में संतप्त राजा नल ने चम्पा की कलियों देखकर उन्हें कामदेव की पूजा का दीपक समझा।

विचिन्वतीः पान्थपतङ्गहिंसनैरपुण्यकर्माण्यलिकज्जलच्छलात्।
व्यलोकयच्चम्पककोरकावलीः स शम्बराऽरेर्बलिदीपिका इव॥

सूरज के अस्त हो जाने पर चारों दिशाओं में व्याप्त अन्धकार का वर्णन क हुए महाकवि श्रीहर्ष की कल्पना द्रष्टव्य है—

ऊर्ध्वार्पितन्युब्जकटाहकल्पे यद्व्योम्नि दीपेन दिनाधिपेन।
न्यधायितद्भूम मिलद्गुरुत्वं भूमौ तमः कज्जलमस्खलत्किम्॥

अर्थात् रवि एक दीपक के समान है जिसके ऊपर के जल को संग्रह करने लिये आकाश उलटे हुए कटोरे के समान प्रतीत होता है तथा इस आकाश कटोरे में काजल इतना अधिक जमा हो गया है कि वह चारों ओर भूमि पर गिर है और चारों तरफ फैल रहा है। सायंकालीन फैलते हुए अन्धकार पर श्रीहर्ष अत्यन्त मनोहारि कल्पना की है।

प्रकृति की सजीवता का एक अन्य उदाहरण प्रंशसनीय है। कोयल अपनी आँखों को लाल करके पथिकों को शाप दे रही है कि तुम और अधिक दुर्बलता को प्राप्त करते जाओ, बार-बार मूर्च्छित होओ, ज्वरपीड़ित होओ। महाकवि के शब्दों में—

दिने दिने त्वं तनुरेधि रेऽधिकं पुनः पुनमूर्च्छ च मृत्युच्छ च।
इतीव पान्थंशपतः पिकान्द्विजान्सखेदमैक्षिष्ट स लोहितेक्षणान्॥

प्रकृति-चित्रण में कहाकवि श्रीहर्ष ने पशु-पक्षियों तथा मनुष्य के कौटुम्बिक सम्बन्ध का दर्शन कराकर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की परम्परा का पालन किया है।

श्रीहर्ष ने सूर्य को संन्यासी के रूप में चित्रित करते हुए लिखा है—सूर्य रूपी संन्यासी दण्ड हाथ में लेकर सम्पूर्ण दिन चारों दिशाओं में घूमता रहता है और सांयकाल के समय जलाशय में स्नान करने के लिए मानों वह सांयकालीन लाल आकाश मण्डलरूपी कषाय वस्त्र को अपने शरीर के ऊपरी भाग पर धारण कर रहा हो। श्रीहर्ष की उत्प्रेक्षामय प्रकृति का चित्रण अद्वितीय है। महाकवि के शब्दों में—

आदाय दण्डं सकलासु दिक्षु योऽयं परिभ्राम्यति भानुभिक्षुः।
अब्धौ निमज्जन्निव तापसोऽयं सन्ध्याभ्रकाषायमधत्त सायम्॥

श्रीहर्ष ने अपने पूर्ववर्ती कवियों का अनुभव ध्यान में रखते हुए प्रकृति चित्रण किया है। परन्तु प्रकृति के आलम्बन रूप का वर्णन प्रायः अनुपलब्ध है। प्रस्तुत काव्य में उद्दीपन दृष्टि से प्रकृति का वर्णन प्राप्त होता है। महाकवि की अद्भुत कल्पनाएँ मस्तिष्क को तो अवश्य प्रभावित करती हैं परन्तु हृदय को आप्यायित करने में असमर्थ है। श्रीहर्ष के प्रकृति चित्रण में भी कृत्रिमता आ गई है।

(12) प्रश्न—'नैषध' के आधार पर दमयन्ती का चरित्र चित्रण करें।

उत्तर—'नैषध' महाकाव्य संस्कृत साहित्य निधि के सर्वश्रेष्ठ रत्नों में से एक है। इस महाकाव्य में महाकाव्य के सभी लक्षण विद्यमान हैं। 'नैषध' रूपी मणि की आभा से श्रीहर्ष की विद्वता काव्यकुशलता का अनुमान सहजता से लगाया जा सकता है। इस महाकाव्य में भाषा सौन्दर्य भाषासौष्ठव, पदलालित्य, स्वरमाधुर्य ओज प्रासादगुण, मनोहारिचित्रण, श्रेष्ठ चरित्र-चित्रण, एक-साथ देखने को मिलता है।

पात्र-चित्रण में भी श्रीहर्ष की तूलिका अत्यन्त दक्ष है । नायक नायिका के चरित्र को उन्होंने अत्यन्त सुन्दर उपमाओं से चित्रित किया है । इस महाकाव्य की नायिका विदर्भ देश की राजकुमारी दमयन्ती है । वह कुण्डिनपुरी के राजा भीमसेन की पुत्री है इसीलिए उसे भीमजा या भैमी कहकर भी संबोधित किया गया है। उसका सौन्दर्य असाधारण है । दमयन्ती में भारतीय संस्कृति के अनुरूप नारी जाति के सभी गुण उपस्थित हैं ।

अनिन्द्यसुन्दरी—दमयन्ती के सौन्दर्य की ख्याति दूर-दूर तक फैली हुई है उसके अनुपम सौन्दर्य की ख्याति को सुनकर ही राजा नल भी उस पर आसक्त हो जाते हैं । उसके असाधारण सौन्दर्य का वर्णन करते हुए श्रीहर्ष का कथन है—

हृतसारमिवेन्दुमण्डलं दमयन्तीवदनाय वेधसा ।
कृतमध्यबिलं विलोक्यते धृतगम्भीरखनीखनीलिम ॥

अर्थात् ब्रह्मा ने दमयन्ती के मुख को बनाने के लिए चन्द्रमण्डल को निचोड़कर सारभाग ग्रहण करके ही दमयन्ती के मुख का निर्माण किया है । इसीलिए चन्द्र का सारभाग निकल जाने से उसके मध्य भाग में छिद्र हो गया है जिसमें चन्द्र के पृष्ठभाग में स्थित नीले आकाश की नीलिमा दिखाई देती है ।

दमयन्ती के नखशिख वर्णन में श्रीहर्ष ने मनोहारि वर्णन किया है । यथा—

अपि तद्वपुषि प्रसर्पतोर्गमिते कान्तिझरैरगाधताम् ।
स्मरयौवनयोः खलु द्वयोः प्लवकुम्भौ भवतः कुचावुभौ ॥

कुलीननायिका—दमयन्ती उच्चकुलोत्पन्न नायिका है । वह परमसुन्दरी, लज्जाशीला, स्थिरचित्ता मुग्धा नायिका है । वह विनयसम्पन्ना सती-साध्वी स्त्री के रूप में कुलीना नायिका है ।

आदर्श प्रेमिका—दमयन्ती एक आदर्श प्रेमिका है । नरश्रेष्ठ राजा नल की कीर्ति सुनकर ही वह नल पर अनुरक्त हो जाती है । हंस नल के गुणों को सुनाकर दमयन्ती के अन्तःकरण में स्थित अनुराग का परिचय प्राप्त करना चाहता है तो दमयन्ती शालीनतापूर्वक कहती है जिस मनोरथ को मेरा मन नहीं छोड़ता है तथा जिसको मैंने अपने हृदय में धारण कर लिया है वह मेरे कण्ठ पथ में कैसे आ सकता है अर्थात् उसको मैं मुख से कैसे कह सकती हूँ क्योंकि मन की इच्छा को वाणी नहीं कह सकती है । कवि श्रीहर्ष के शब्द द्रष्टव्य हैं—

मनस्तु यं नोज्झति जातु, यातु मनोरथः कण्ठपथं कथं सः ।
का नाम बाला द्विजराजपाणिग्रहाभिलाषं कथयेदभिज्ञा ॥

दमयन्ती पवित्र प्रेम करने वाली नायिका है उसमें उच्छृंखल वासना नहीं है अपितु उसकी तो एकमात्र अभिलाषा है नल की दासी बनने की, वह हंस से कहती है—

तदेकदासीत्वपदादुदग्रे मदीप्सिते साधु विधित्सुता ते ।
अहेलिना किं नलिनी विधत्ते सुधाऽऽकरेणाऽपि सुधाकरेण? ॥

दमयन्ती अपने प्रेम की परीक्षा में उत्तीर्ण तभी होती है जब पाँच नलों में नल को पहचान कर वरमाला डालती है । नल के सम्मुख वह देवताओं को भी पसंद नहीं करती है । अंत में देवता भी नल दमयन्ती को आशीर्वाद देकर जाते हैं ।

इस प्रकार वह पतिव्रता अपने प्रेमी में अनन्य निष्ठा रखने वाली है । तभी तो हंस प्रशंसा में कहता है—

धन्याऽसि वैदर्भि ! गुणैरुदारैर्यया समाकृष्यत नैषधोऽपि ।

दमयन्ती सीता, सावित्री, शकुन्तला की शृङ्खला की अगली मणि है । वह एक नवयौवना परम सुन्दरी लज्जाशीला तथा स्थिरचित्ता मुग्धा नायिका है ।

विवाहोपरान्त दमयन्ती एक आदर्श गृहिणी के रूप में हमारे समक्ष आती है वह देवपूजा किया करती थी तथा पति को भोजन कर लेने के पश्चात् ही भोजन करती थी । उसके सम्पूर्ण चरित्र की विशेषता इन्द्र के शब्दों में इस प्रकार है—

सा भुवः किमपि रत्नमनर्घं भूषणं ज़यति तत्र कुमारी ।

अर्थात् दमयन्ती पृथ्वी का भूषण कोई अमूल्य रत्न और अमोघ कामशास्त्र है ।

दमयन्ती भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व करने वाली आदर्श नायिका है ।

(13) प्रश्न—नैषध महाकाव्य के प्रथम सर्ग की कथा संक्षेप में लिखिए ।

उत्तर—संस्कृत साहित्यनिधि के उत्कृष्ट रत्नों में पमुख है 'नैषधीयचरितम्' । श्रीहर्ष की अद्वितीय प्रतिभा का निदर्शन हमें इस महाकाव्य से प्राप्त हो जाता है । नैषध की कथावस्तु महाभारताश्रित है । महाभारत के नलोपाख्यान पर आश्रित लघु कथा को श्रीहर्ष ने अद्‌भुत विशालता प्रदान कर अपनी प्रतिभा प्रमाणित कर दी है । अपने विशेषताओं के कारण ही इसकी गणना 'बृहत्रयी' के अन्तर्गत की जाती है । साहित्य प्रेमियों ने तो यहाँ तक कहा है कि—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

अलङ्कारों का अनुपम प्रयोग, शब्दों का अक्षय भंडार सतत रस प्रवाह, पात्र चित्रण, प्रसंगानुकूल उद्धरण, मनोहारि प्रकृति चित्रण पाठकों को बांधने में पूर्णतया सक्षम हैं ।

यह महाकाव्य 22 सर्गों में निबद्ध है । इसका प्रथम सर्ग काव्यत्व दृष्टि से अद्भुत है । इस सर्ग में प्रारम्भ में महाराजा नल के गुणों का वर्णन किया गया है । नल के गुणों के वर्णन में श्रीहर्ष ने अपनी विद्वता का पूर्ण परिचय दिया है । प्रथम सर्ग के प्रथम श्लोक में ही उन्होनें नल की कथा को अमृत से भी श्रेष्ठ बताया है । यथा—

निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथां तथाऽऽद्रियन्ते न बुधाः सुधामपि ।
नलः सितच्छत्रितकीर्तिमण्डलः स राशिरासीन्महसां महोज्जवलः ॥

राजा नल का वैदुष्य अद्भुत है । उन्होंने चौदह विद्याओं के अध्ययन अर्थज्ञान, तद्नुसार आचरण तथा प्रचार रूप चार दशाओं के द्वारा चतुदर्शत्व अर्थात् (14X4) छप्पन प्रकार का करा दिया है । सम्पूर्ण पृथिवी को जीतने वाले राजा नल के पास श्री तथा विद्या दोनों का अक्षय भण्डार था । राजा नल का प्रभाव इतना अधिक था कि उनके राज्य में अधर्म भी अपने एक चरण की छोटी अंगुली से भूमि का स्पर्श करते हुए तप में संलग्न था । राजा नल के सैनिकों के प्रयाण से उड़ी हुई धूलि क्षीरसागर में गिरकर कीचड़ हो जाती है तथा क्षीरसागर से उत्पन्न चन्द्रमा में वही कीचड़ कलङ्क के रूप में नजर आता है ।

राजा नल की कीर्ति तथा गुणों को अपने दूतों, द्विज आदि से सुनकर विदर्भ नरेश की पुत्री दमयन्ती उन पर आसक्त हो उठती है । राजा भीम की पुत्री दमयन्ती ने अपने काम के वशीभूत मन को राजा नल के प्रति पूर्णरूप से समर्पित कर दिया—

नृपेऽनुरूपे निजरूपसम्पदां दिदेश तस्मिन् बहुशः श्रुतिं गते ।
विशिष्य सा भीमनरेन्द्रनन्दना मनोभवाज्ञैकवशंवदं मनः ॥

राजा नल भी दमयन्ती के गुण-सौन्दर्य से आकृष्ट होकर कामदेव के बाणों से

घायल हो जाते हैं। सभा तथा राजकार्यों में उनका चित्त एकाग्र नहीं हो पाता। अतः मनोविनोद हेतु वे वन की ओर प्रस्थान करते हैं। वन में जाते हुए राजा नल के घोड़ों का अद्भुत वर्णन श्रीहर्ष ने किया है। यथा—

सितत्विषश्चञ्चलतामुपेयुषो मिषेण पुच्छस्य च केसरस्य च।
स्फुटां चलच्चामरयुग्मचिह्नैकरनिह्नुवानं निजवाजिराजताम्॥

राजा नल के घोड़े का वेग गरुड़ के समान है। इन्द्र के घोड़े उच्चैःश्रवा की शोभा को भी नीचा दिखलाने वाले हैं। उन घोड़ों के लिए यह पृथ्वी बहुत ही थोड़ी है अतः वे अत्यधिक उड़ा रहे हैं ताकि समुद्र भी स्थल बन जाये तथा उनके गमन करने हेतु पर्याप्त स्थल हो जाये। राजा नल के घोड़े आकाश को लाँघना चाहते हैं परन्तु उन्होंने यह सोचकर "कि भगवान विष्णु ने तो इसे एक पैर में लाँघ लिया तो हम चार पैरों से क्यों मापे" अपना विचार त्याग दिया। महाकवि श्रीहर्ष के शब्दों में—

हरेर्यदक्रामि पदैककेन खं पदैश्चतुर्भिः क्रमणेऽपि तस्य नः।
त्रपा हरीणामिति नम्रिताऽऽननैर्न्यवर्ति तैरर्धनभः कृतक्रमैः॥

राजा नल के राज्य के वन प्रवेश में महाकवि श्रीहर्ष ने प्रकृति-चित्रण का भी मनोहारि दृश्य उपस्थित किया है। नूतन पल्लवों से युक्त तथा सघनछाया से परिपूर्ण विलास वन में शान्ति की अभिलाषा से उसी प्रकार प्रविष्ट हुए जिस प्रकार भगवान विष्णु मूँगों की लालिमा से मिश्रित तथा मेघों जैसी कान्ति को धारण करने वाले क्षीरसागर में शयन करने की इच्छा से प्रवेश करते हैं।

नैषध के प्रथम अङ्क के वन प्रसङ्ग के वर्णन से यह सिद्ध होता है कि भारत के प्राचीन राजा वन सम्पदा की देखभाल अच्छी तरह करते थे। राजा नल के वन में प्रवेश करते ही उद्यानरक्षक के द्वारा राजा को फूलों और फलों से युक्त वन की शोभा को दिखाया गया। स्वभावोक्ति अलङ्कार से प्रकृति चित्रण करता यह श्लोक रमणीय है।

ततः प्रसूने च फले च मञ्जुलें स सम्मुखस्थाऽङ्गुलिना जनाधिपः।
निवेद्यमानं वनपालपाणिना व्यलोकयत् काननरामणीयकम्॥

वन में अनेक प्रकार के पुष्पों को राजा नल ने देखा। वन प्रान्त में ही एक अत्यन्त विशाल तालाब था। राजा नल ने तालाब में तैरते हुए अत्यन्त सुन्दर हंस

को देखा । विरहानल से राजा सन्तप्त राजा नल ने पक्षी को पकड़ लिया । हंस ने मनुष्यवाणी में नल की निन्दा करते हुए अपनी माता, पत्नी तथा बच्चों के लिए अत्यन्त करुण विलाप किया । यथा—

मदेकपुत्रा जननी जराऽऽतुरा नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी ।
गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दयन्नहो ! विधे ! त्वां करुणा रुणद्धि नो ॥

अंततः राजा नल हंस को छोड़कर अपनी सहृदयता का परिचय देते हुए कहते हैं—

रूपमदर्शि धृतोऽसि यदर्थे गच्छ यथेच्छमथेत्यभिधाय ।

इस प्रकार प्रथम अङ्क में महाकवि श्रीहर्ष ने राजा नल के गुण, उनकी राज्यव्यवस्था वन चित्रण के माध्यम से प्रकृति-चित्रण का सुन्दर वर्णन किया है। उत्प्रेक्षा अर्थापत्ति स्वभावोक्ति, विरोधाभास, अतिशयोक्ति आदि अलङ्कारों की सहायता से सभी वर्णनों में सफल हुए हैं ।

(14) प्रश्न—नैषध महाकाव्य के द्वितीय सर्ग की कथा संक्षेप में लिखिए।

उत्तर—महाकवि श्रीहर्ष संस्कृत साहित्य के मूर्धन्य कवियों में एक हैं । इनकी कृति 'नैषधीयचरितम्' को भी संस्कृत साहित्य में अत्यन्त गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। 22 सर्गों में निबद्ध यह महाकाव्य पात्र-चित्रण, कथावस्तु, भाषा, अलङ्कारशैली सभी दृष्टि से अद्वितीय हैं । इस महाकाव्य से ही श्रीहर्ष के विद्वता का ज्ञान हो जाता है। निषध देश के महाराजा नल की कथा अत्यन्त पवित्र है । यह महाकाव्य अपने गुणों के कारण ही 'बृहत्त्रयी' में स्थान प्राप्त कर पाया है ।

'नैषध' के द्वितीय सर्ग में महाकवि श्रीहर्ष ने राजा नल को आदर्श प्रेमी के रूप में चित्रित किया है । प्रथम सर्ग के अन्त में राजा नल चित्तविनोद हेतु वन की ओर प्रस्थान करते हैं तथा सुनहले हंस को पकड़ लेते हैं । हंस द्वारा विलाप करने पर राजा उसे छोड़ देते हैं । द्वितीय सर्ग में इसके आगे की कथावस्तु वर्णित है ।

हंस नल राजा के द्वारा छुटकारा पाकर अपने घोंसले में जाता है । राजा के पकड़े जाने पर हंस राजा को कई प्रकार से उलाहना देता है । पुनः वह मुक्त किये जाने पर राजा की प्रशंसा तथा उनसे क्षमा याचना करते हुए कहता है—

यदवादिषमप्रियं तव प्रियमाधाय नुनुत्सुरस्मि तत् ।
कृतमातपसञ्ज्वरं तरोरभिवृष्याऽमृतमंशुमानिव ॥

अर्थात् हे राजन् जैसे सूर्य अपने से की गयी पेड़ में धूप की पीड़ा को जल की वृष्टि से हटाते हैं उसी तरह मैंने जो आपको अप्रिय कहा है, प्रिय वचन कहकर उसे हटाता हूँ।

हंस भी राजा द्वारा छोड़े जाने को उपकार मानकर राजा के प्रत्युपकार के लिए उत्सुक है। वह सोचता है—

पतगेन मया जगत्पतेरुपकृत्यै तव किं प्रभूयते।

राजा के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए वह दमयन्ती के पास जाकर राजा नल के गुणों का वर्णन करता है। इसी प्रसंग में दमयन्ती के अलौकिक सौन्दर्य का वर्णन महाकवि श्रीहर्ष ने अलौकिक शब्दों में किया है। 'दमयन्ती' के नाम की सार्थकता को श्रीहर्ष इस प्रकार सिद्ध करते हैं—

भुवनत्रयसुभ्रुवामसौ दमयन्ती कमनीयतामदम्।
उदियाय यतस्तनुश्रिया दमयन्तीति ततोमिधां दधी॥

अर्थात् वह भीम की पुत्री जिस कारण से अपने शरीर के सौन्दर्य से तीन लोकों की सुन्दरियों के सौन्दर्य गर्व का दमन करती हुई उत्पन्न हुई उस कारण से उन्होंने 'दमयन्ती' ऐसे नाम को धारण किया। दमयन्ती के नेत्रों ने मृग नेत्र की शोभा को परास्त कर दिया है। दमयन्ती की भौंहे जगत् को जीतने के लिए उत्पन्न रति और कामदेव के धनुष के समान हैं।

राजा नल दमयन्ती के प्रेम में आसक्त होकर राजहंस से अपना सदेश दमयन्ती के पास भेजने को उत्सुक हैं। राजा नल दमयन्ती के प्रेम में अत्यन्त अधीर हो रहे हैं। कामदेव के बाणों से संतप्त राजा के हृदय का चित्रण आतुर प्रेमी के समान द्रष्टव्य है। यथा—

कुसुमानि यदि स्मरेषवो न तु वज्रं विषवल्लिजानि तत्।
हृदयं यदमूमुहन्नमूर्मम यच्चातितमामतीतपन्॥

राजा नल विरहानल में दग्ध होकर हंस को अपनी प्रेमिका के समीप भेजते हुये कहते हैं—हे हंस तुम्हारा मार्ग मङ्गलमय हो। जाओ मेरे अभीष्ट का संपादन करो। हंस तदनन्तर दमयन्ती के पास जाता है।

प्रसंगतः महाकवि श्रीहर्ष ने कुण्डिनपुर का वर्णन अत्यन्त सुन्दर शब्दों में किया है।

(15) प्रश्न—'नैषध महाकाव्य' के तृतीय सर्ग की कथावस्तु को संक्षेप में लिखिए।

उत्तर—बाइस सर्गों में विभक्त, महाकाव्य के लक्षणों से युक्त, शब्द अलङ्कार तथा रस से भरपूर महाकाव्य 'नैषधीयचरितम्' को संस्कृत साहित्य में विशिष्ट स्थान प्राप्त है। यह संस्कृत साहित्य निधि का अमूल्य रत्न है। इसमें वर्णित 'राजा नल की कथा अमृत को भी तिरस्कार करने वाली है'; श्रीहर्ष का यह कथन प्रत्येक सर्ग के अध्ययन से सिद्ध हो जाता है। श्रीहर्ष की अद्वितीय प्रतिभा का परिचायक यह काव्य, शब्दों के अद्भुत भण्डार, अलङ्कारों का चमत्कृत प्रयोग, रस की निरन्तरता पात्रो के चरित्र की उदात्तता से समन्वित है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण इसे त्रयी के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है।

श्रीहर्ष ने 'हंस' के रूप में अद्भुत प्रात्र की रचना की है। राजा नल के द्वारा छोड़े जाने पर हंस दमयन्ती के पास सन्देश लेकर जाता है। तृतीय सर्ग में हंस दमयन्ती के नगर में पहुँच कर राजकुमारी के समीप उतरता है। ऐसे अद्भुत हंस को देखकर राजकुमारी के मन में उसे पकड़ने की इच्छा होती है। हंस राजकुमारी को एकान्त स्थान में ले जाकर मनुष्य वाणी में कहता है—

सहस्रपत्रासनपत्रहंसवंशस्य पत्राणि पतत्रिणः स्मः।
अस्मादृशां चाटुरसाऽमृतानि स्वर्लोकलोकेतरदुर्लभानि॥

अपना परिचय देता हुआ हंस कहता है कि हे राजकुमारी हम ब्रह्माजी के वाहन हंसों के कुल में उत्पन्न पक्षी हैं। हमारे सरीखे लोगों के सुभाषित रस रूप अमृत देवभिन्न मनुष्यों के लिए दुर्लभ हैं। अपना परिचय देकर हंस राजा नल के गुणों की प्रशंसा करता हुआ कहता है—नल के सिवाय मैं किसी से ग्राह्य नहीं होऊँगा। नल की प्रशंसा सुन्दर शब्दों में करता है—

क्रियेत चेत्साधुविभक्तिचिन्ता व्यक्तिस्तदा सा प्रथमाऽभिधेया।
या स्वौजसां साधयितुं विलासैस्तावत्क्षमानामपदं बहु स्यात्॥

अर्थात् सज्जनों की गणना में 'नल' का नाम सर्वप्रथम करना चाहिए। यतः उसका प्रताप वैभव अद्भुत है। नल के सौन्दर्य से अप्सराएँ भी प्रभावित हैं। शिवानी और इन्द्राणी सरस्वती भी नल के गुणों से प्रभावित हैं। नल की सौन्दर्य और सम्पत्ति को देखकर लोगों ने कामदेव और इन्द्र को भी भुला दिया है।

श्रियौ नरेन्द्रस्य निरीक्ष्य तस्य स्मारांऽमनेन्द्रावपि न स्मरामः ।
वासने सम्यक् क्षमयोश्च तस्मिन् बुद्धौ न दध्मः खलु शेषबुद्धौ ॥

एवमेव राजा नल के गुणों के वर्णन का हंस दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति अनुराग उत्पन्न करता है । प्रारम्भ में दमयन्ती नल के प्रति अपने भाव छुपाती है अनन्तर व्यक्त रूप में नल के प्रति अपना अनुराग दिखाती है ।

चेतो नलङ्कामयते मदीयं नाऽन्यत्र कुत्रापि च साऽभिलाषम् ॥

तब हंस उपयुक्त अवसर पाकर नल का संदेश दमयन्ती से कहता है—

अजस्रमारोहसि दूरदीर्घां सङ्कल्पसोपानततिं तदीयाम् ।
श्वासान् स वर्षत्यधिकं पुनर्यद्ध्यानात्तव त्वन्मयतामवाप्य ॥

हे भैमि नल भी आपको बहुत चाहते हैं । वे आपका ध्यान सदैव करते हैं । हंस राजा नल के प्रेम को प्रकट करता है, तभी सखियाँ आ जाती हैं—

कान्तारे निर्गताऽसि प्रियसखि ! पदवी विस्मृता किं नु मुग्धे! ।
मा रोदीरेहि यामेत्युपहृतवचसो निन्युरन्यां वयस्याः ॥

ऐसा कहती हुई सखियाँ प्रवेश कर राजकुमारी को राजप्रासाद में ले जाती हैं तथा हंस राजकुमारी दमयन्ती के साथ हुए संभाषण को नल को कहने के लिए प्रस्थान करता है । नल के समीप पहुँचकर हंस सारा वृत्तान्त कहता है । राजा नल ने हंस द्वारा कही गयी बातों को सुनकर अत्यन्त आनन्द प्राप्त किया ।

प्रकृत सर्ग में श्रीहर्ष ने उपजाति छन्द का प्रयोग किया है । अलङ्कारों में स्वाभावोक्ति, अतिशयोक्ति, उपमा, रूपक, श्लेष का प्रयोग अत्यन्त कुशलता से किया है । हंस ने अत्यन्त पटुता से रजकुमारी दमयन्ती के गोपनीय भावों को प्रकाशित करवाया है । इस सर्ग में भी श्रीहर्ष की प्रतिभा सर्वत्र प्रकाशित होती है । कथा प्रवाह में निरन्तरता सर्वत्र दिखाई देती है ।

व्याख्यात्मक भाग

प्रथम सर्ग

(1) **निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथां तथाऽऽद्रियन्ते न बुधाः सुधामपि।**
नलःसितच्छत्रितकीर्तिमण्डलः स राशिरासीन्महसां महोज्ज्वलः ॥

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण, तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी है। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः?।

प्रसंग—प्रकृत श्लोक श्रीहर्षकृत 'नैषधीयचरितम्' महाकाव्य के प्रथम सर्ग से लिया गया है। इस महाकाव्य में निषध देश के अधिपति राजा नल के पावन चरित्र का सुन्दर वर्णन किया गया है।

अर्थ एवं भावार्थ—राजा नल की कथा का भली-भाँति अध्ययन का आनन्द प्राप्त करने वाले विद्वान् लोग अथवा देवलोक में विद्यमान अमृतभोग देवता भी अमृत का उतना आदर नहीं करते हैं। अन्य शब्दों में इस प्रकार कहा जा सकता है कि जिसकी कथा को सुनकर विद्वान् अथवा देवगण, सुधामय अर्थात् चन्द्रमा का भी उतना आदर नहीं करते हैं। ऐसे तेजस्वी या सूर्यकान्ति के समान देदीप्यमान राजा ने सम्पूर्ण दिशाओं में फैले हुए कीर्ति समूहरूपी श्वेतच्छत्र धारण करने वाले तथा महान् अत्यधिक उज्जवल चरित्र वाले थे।

प्रकृत श्लोक ही मङ्गलाचरण भी है क्योंकि यह कथा सभी प्रकार के पापों का नाश करने वाली है। राजा नल की कथा कीर्त्तन पाप विनाशिनी है—

कर्कोटस्य नागस्य दमयन्त्या नलस्य च।
ऋतुपर्णस्य राजर्षेः कीर्तनं कलिनाशनम् ॥

अलङ्कार-छन्द—प्रकृत श्लोक में वंशस्थ छन्द तथा रूपक और व्यतिरेक अलङ्कार है।

टिप्पणी-शब्दार्थ—

क्षितिरक्षिणः = पृथ्वी की रक्षा करने वाले राजा का

बुधाः = कथाज्ञाता

महसां राशि = तेजपुञ्ज।

समास—सितच्छत्रितकीर्तिमण्डलः = सितच्छत्रं कृतं कीर्तिमण्डलं येन सः

महोज्जवलः = महैः उत्सवैः उज्जवलः इति

निपीय = पीङ् धातु + ल्यप् प्रत्यय अर्थात् पीकर।

(2) रसैः कथा यस्य सुधाऽवधीरिणी नलः सः भूजानिरभूद्गुणाद्भुतः।
सुवर्णदण्डैकसितातपत्रितज्वलत्प्रतापावलिकीर्तिमण्डलः ॥ 1/2

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विंशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रकृत श्लोक महाकवि श्रीहर्ष कृत 'नैषधीयचरित' से संगृहीत है। इस श्लोक में महाराज नल की कथा को अमृत से भी श्रेष्ठ बताया गया है। महाप्रतापी नल के गुणों का वर्णन किया जाता है।

अर्थ एवं भावार्थ—राजा नल की कथा रस की दृष्टि से अमृत को तिरस्कृत करने वाली है। अर्थात् राजा नल की कथा स्वाद में अमृत से भी बढ़कर है। अमृत में मधुर आदि रस होते हैं ज़बकि राजा नल की कथा शृङ्गारादि नौ रसों वाली हैं अतः अमृत से भी श्रेष्ठ है। सम्पूर्ण पृथिवी राजा नल की पत्नी है, वे सम्पूर्ण भूमि के पालक हैं। ऐसे राजा नल ने अपने देदीप्यमान प्रताप को ही अपने श्वेतवर्ण

वाले राजछत्र का सुवर्णनिर्मितदण्ड तथा अपने कीर्तिसमूह को ही श्वेतछत्र बना रखा था। राजा नल अद्भुत गुणों वाला था अर्थात् उसमें उदारता, वीरता आदि गुणों से युक्त तथा ऐश्वर्यशाली व गौरवशाली थे।

अलङ्कार-छन्द—प्रकृत श्लोक में व्यतिरेक तथा रूपक अलङ्कार है। नल की कथा को अमृत की अपेक्षा अधिक सुस्वादु कहे जाने के कारण व्यतिरेक अलङ्कार है। इसका लक्षण है—"व्यतिरेकोविशेषश्चेदुपमानोपमेययोः"। राजा नल में तेजोराशि होने का आरोप किये जाने तथा कीर्तिमण्डल में श्वेत छत्रत्व का आरोप किये जाने से रूपक अलङ्कार है। रूपक का लक्षण है—"यत्रोपमानचित्रेण सर्वथाप्युपरज्यते उपमेयमयी भित्तिस्तत्र रूपकमिष्यते" ॥ दोनों अलङ्कारों का एक साथ एक ही स्थल पर प्रयोग होने के कारण 'संसृष्टि' अलङ्कार भी होता है। यहाँ वंशस्थ छन्द है जिसका लक्षण है—'जतौ तु वंशस्थ मुदीरितं जरौ' इसमें 'जगण', 'तगण', 'जगण' और 'रगण', होते हैं।

व्याख्या टिप्पणी—सुधावधीरिणी = सुधार (उपपाद) + अव + √धीर+णिनि

भूजानिः = भू जाया यस्य स भूजानिः बहुब्रीहि समास,

गुणाद्भुतः = गणैः अद्भुतः।

शब्दार्थ—सुधावधीरिणी = अमृत को भी तिरस्कृत करने वाली

भू जानिः = पृथ्वी का पति।

उपर्युक्त श्लोक से स्पष्ट है कि राजा सद्गुणों से युक्त क्षत्रिय राजा थे।

(3) अधीतिबोधाचरणप्रचारणैर्दशाश्चतस्रः प्रणयन्नुपाधिभिः।
चतुर्दशत्वं कृतवान्कुतः स्वयं न वेद्मि विद्यासु चतुर्दशस्वयम् ॥ 1/4

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रकृत श्लोक में राजा नल की विद्याओं का वर्णन किया गया है।

अर्थ—राजा नल चौदह विद्याओं में कुशल थे। अर्थात् उनको चौदह शास्त्रों का ज्ञान था। चौदह विद्याओं से तात्पर्य है ऋक्, यजु, साम, अथर्ववेद तथा शिक्षा, कल्प, व्याकरण, ज्योतिष, निरुक्त तथा छन्द, वेदाङ्ग तथा मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र तथा पुराण का सफलता तथा गहनतापूर्वक अध्ययन किया। अध्ययन के चारों सोपानों में अर्थात् अध्ययन शब्द ज्ञान आचरण तथा अध्यापन रूपं चारों अवस्थाओं से चौदहों विद्याओं का पर्याप्त प्रचार-प्रसार किया।

अलङ्कार—प्रकृत श्लोक में विरोधाभास अलङ्कार है। यतः चौदह विद्याएँ—अध्ययन, अर्थज्ञान, आचरण तथा प्रचार रूप चार दशाओं के आधार पर छप्पन करना चाहिये था परन्तु चतुदर्शत्व ही कहा गया है। अतः यहाँ दो रूपों में विरोध को दर्शन होता है। इसका लक्षण है—आभासत्वे विरोधस्य विरोधाभास उच्यते।

व्याख्या टिप्पणी—चतस्तः = चतु:संख्यका:

दशाः = अवस्था:

प्रणयन् = कुर्वन्

स्वयम् = आत्मना

चतुर्दशत्वं = चतुर्दशसंख्यकत्वं

(4) अमुष्य विद्या रसनाऽग्रनर्तकी त्रयीव नीताऽङ्गगुणेन विस्तरम्।
अगाहताऽष्टादशतां जिगीषया नवद्वयद्वीपपृथग्जयश्रियाम्॥ 1/5

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघ:? क्व च भारवि:? ॥

अर्थ—चौदह विद्याएँ, चार वेद, छःवेदाङ्ग, मीमांसा, न्याय, धर्म, पुराण तथा आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद और अर्थशास्त्र ये अष्टादश विद्याएँ सदैव नल के जिह्वा

के अग्रभाग पर निवास किया करती थीं। इसके अतिरिक्त राजा ने अठारह द्वीपों पर भी पृथक्-पृथक् रूप से विजय प्राप्त कर ली थी। राजा नल ने स्वभावतः परस्पर विरोधिनी लक्ष्मी और सरस्वती दोनों को ही जीता था अर्थात् उनके पास विद्या तथा धन दोनों ही पर्याप्त थे।

लोक में धन तथा विद्या एकत्र बहुत कम ही प्राप्त होता है। परन्तु राजा नल के पास दोनो ही हैं। अतः राजा नल सर्वगुणसम्पन्न नायक हैं। राजा नल अठारह विद्याओं के ज्ञाता थे तथा उन्होंने अठारह द्वीपों पर विजय प्राप्त की थी।

व्याख्या टिप्पणी—रसनाऽग्रनर्तकी = रसनाया अग्रम् (ष. त.)

जिगीषया = जि + √सन् + अ

अङ्गगुणेन = अङ्गानां गुणेन

नवद्वयद्वीपपृथग्जयश्रियाम् = नवानां द्वय नवद्वयं, नवद्वयानां द्वीपानां पृथक् भूताः याः जयश्रियः तासां नवद्वयद्वीपपृथग्जयश्रियाम्।

नीता = √नी + क्त + टाप्।

द्वीप अठारह माने गये हैं। महाकवि कालिदास ने भी "अष्टादशद्वीपनिखातयूपः" कहकर अठारह द्वीपों की चर्चा की है। सात महाद्वीप निम्न हैं—जम्बूद्वीप, प्लक्षद्वीप, शाल्मलीद्वीप, कुशद्वीप, क्रौञ्चद्वीप, शाकद्वीप तथा पुष्करद्वीप ये नाम श्रीमद्भागवत के अनुसार हैं स्वर्णप्रस्थ आदि आठ जम्बूद्वीप के उपद्वीप हैं। श्लोक में प्रयुक्त 'विद्या' शब्द का अर्थ प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ ने पाक विद्या किया है। मीठा, खट्टा, आदि छः रसों की न्यूनता, अधिकता तथा समता की दृष्टि से प्रत्येक के तीन-तीन भेद होंगे इस प्रकार पाकविद्या भी अठारह प्रकार की होगी।

अलङ्कार—राजा नल ने अठारह द्वीपों के पृथक्-पृथक् जीतने से अठारह जयश्रियों को नीचा दिखलाने की इच्छा से पूर्वोक्त प्रकार से अठारह हो गयी। यहाँ 'उत्प्रेक्षा' अलङ्कार है तथा 'उपमा' भी है। अतः यहाँ संसृष्टि अलङ्कार है।

(5) पदैश्चतुर्भिः सुकृते स्थिरीकृते कृतेऽमुना के न तपः प्रपेदिरे।
भुवं यदेकाङ्घ्रिकनिष्ठया स्पृशन्दधावधर्मोऽपि कृशस्तपस्विताम्॥1/7

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का

बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रस्तुत श्लोक में राजा नल की राज्य-व्यवस्था का वर्णन किया है। महाकवि श्रीहर्ष ने महाराजा नल के चित्रण में अद्भुत वर्णन कहीं-कहीं किया है। प्रकृत श्लोक भी उन्हीं में से एक है।

अर्थ एवं भावार्थ—राजा नल के व्यक्तित्व के प्रभाव से सतयुग में धर्म या पुण्य को चार चरणों तप, ज्ञान, यज्ञ और दान रूप से स्थिर कर दिया था। तात्पर्य यह है कि राजा नल के राज्य में सभी व्यक्ति धर्म का अर्थात् तप, ज्ञान, यज्ञ और दान का आचरण करते थे। इतना ही नहीं अपितु अधर्म भी अत्यन्त दुर्बल होने के कारण एक चरण की सबसे छोटी अँगुली से पृथिवी को स्पर्श करता हुआ तपंश्चर्या को धारण करता था। राजा नल के प्रजा जन धर्म का आचरण करते थे इसीलिए अधर्म अत्यन्त दुर्बल था।

अलङ्कार-छन्द—प्रकृत श्लोक में अधर्म को भी धार्मिक कहा गया है अतः विरोध होने से 'विरोध' अलङ्कार है। यहाँ वंशस्थ छन्द है।

व्याख्या टिप्पणी—स्थिरीकृते = स्थिर+ च्वि + कृ + क्त
प्रपेदिरे = प्र + पद् + लिट्
दधां = √धा + लिट् + तिप्
एकाङ्घ्रिकनिष्ठया = √ एकया + अङ्घ्रेः + कनिष्ठयः इति।
स्पृशन् = स्पृश् + लट् (शतृ.)।

शब्दार्थ—सुकृते = धर्म को
चर्तुभिः = तप, ज्ञान, यज्ञ, और दानरूपी चार
पदैः = चरणों से
स्थिरीकृते = स्थिर कर दिया।

इस श्लोक में राजा नल के सद्गुणों को दर्शाया गया है। राजा नल के धार्मिक आचरण का यह प्रभाव है कि सम्पूर्ण प्रजा धर्माचरण में आसक्त है।

(6) यदस्य यात्रासु बलोद्धतं रजः स्फुरत्प्रतापाऽनलधूममञ्जिम ।
तदेव गत्वा पतितं सुधाऽम्बुधौ दधाति पङ्कीभवदङ्कतां विधौ ॥ 1/8

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रकृत श्लोक 'नैषधीयचरितम्' के प्रथम सर्ग से संगृहीत है । इसमें राजा नल की सेना का वर्णन किया गया है । यहाँ श्रीहर्ष की कल्पना द्रष्टव्य है ।

अर्थ एवं भावार्थ—राजा नल की दिग्विजय सम्बन्धी यात्राओं में उनकी सेनाओं के चरणों से उठकर ऊपर की ओर उड़ी हुई धूल ही क्षीरसागर में गिरकर कीचड़ बन जाती है । चन्द्रमा जो क्षीरसागर से उत्पन्न होता है अतएव उत्पन्न होते समय वह कीचड़ चन्द्रमा में लग जाता है तथा वही चन्द्रमा में कलङ्क के रूप में दिखाई पड़ती है । राजा नल की सेना के पैरों से उड़ी धूलि प्रताप रूपी अग्नि के धुएँ के समान सुन्दर है अर्थात् देदीप्यमान है ।

अलङ्कार-छन्द—प्रकृत श्लोक में प्रताप अर्थात् कीर्ति में अग्नि का आरोप किया गया है । अतः यहाँ रूपक अलङ्कार है । पुनः चन्द्रमा में जो कलङ्क दिखाई देता है वह राजा नल की सेना के पैरों से उड़ाई गई धूलि है । यहाँ धूलि में कलङ्क होने की संभावना की गई है अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है । प्रस्तुत श्लोक में वंशस्थ छन्द है ।

व्याखा टिप्पणी—यदस्य = नलस्य
यात्रासु = सप्तमी बहुव.
रजः = रजस् नपुं. लि. प्र. एकवचन
सुधाम्बुधौ = अमृत के सागर ।

समास—स्फुरत्प्रतापानलधूममञ्जिम = स्फुरन् ज्वलन् यः प्रतापः तेजः स एव अनलः तस्य धूमस्य इव मञ्जोर्भावः मञ्जिमा स यस्य यत्

पङ्कीभवत् = अपङ्कं पङ्कं भवदिति

प्रस्तुत श्लोक से यह पता चलता है कि राजा नल की सेना बहुत बड़ी थी तथा उनका राज्य समुद्रपर्यन्त था।

(7) **अनल्पदग्धाऽपरिपुराऽनलोज्ज्वलैर्निजप्रतापैर्वलयं ज्वलद्भुवः।**
प्रदक्षिणीकृत्य जयाय सृष्ट्या रराज नीराजनया स राजघः। 1/10

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः?॥

प्रसंग—प्रकृत श्लोक में "राजा नल के सभी राजाओं पर विजय प्राप्तकर भूमण्डल की प्रदक्षिणा करके विजय के उपलक्ष्य में पुरोहितों द्वारा की गई आरती से शोभायमान" होने के प्रसंग का वर्णन है।

अर्थ एवं भावार्थ—राजा नल ने बहुत अधिक शत्रु नगरों को जला दिया। शत्रु नगरों के जलने से देदीप्यमान अग्नि के समान प्रकाशमान हो रहे राजा ने सम्पूर्ण राजाओं को जीतकर पृथिवी मण्डल की प्रदक्षिणा कर पुरोहितों के द्वारा विजय के निर्मित विशेष आरती के द्वारा सुशोभित हुए। तात्पर्य यह है कि राजा नल ने सम्पूर्ण पृथिवी को जीत लिया। विजय यात्रा से वापस आने पर राज्य के नागरिकों ने उनकी आरती उतारी तथा उनका स्वागत किया।

अलङ्कार-छन्द—प्रकृत श्लोक में उत्प्रेक्षा अलङ्कार है। यहाँ पर निज प्रतापों से नीराजना सृष्टि के साथ तादात्म्य आरोपित किये जाने से उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

किञ्चित् अन्य विद्वानों के मतानुसार निजप्रतापों से नीराजना सृष्टि के सम्बन्ध न होने पर भी सम्बन्ध का वर्णन करने से यहाँ अतिशयोक्ति अलङ्कार है।

व्याख्या टिप्पणी-शब्दार्थ—अनल्प = न अल्पानि अर्थात् अत्यधिक

अनलोज्ज्वलैः = अग्नि के समान उज्ज्वल

रराज = राजृ +लिट्, सुशोभित हुए।

समास—राजघः = राज्ञः हन्तीति राजघः ।

प्रदक्षिणीकृत्य = अप्रदक्षिणं प्रदक्षिवं इति प्रदक्षिणीकृत्य,

निजप्रतापैः = निजस्य प्रतापाः ।

(8) सितांऽशुवर्णैर्वयति स्म तद्गुणैर्महांऽसिवेम्नः सहकृत्वरी बहुम् ।
दिगङ्गनाऽङ्गभरणं रणाऽङ्गणे यशःपटं तद्भटचातुरी तुरी ॥ 1/12

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रस्तुत श्लोक में राजा नल के सैनिकों के युद्ध कौशल का वर्णन किया गया है ।

अर्थ एवं भावार्थ—राजा नल के सैनिक अत्यन्त चतुर थे । उनकी चतुरता रूपिणी तथा महान तलवार रूपिणी वेमा का साथ करने वाली तुरी युद्ध के प्रांगण में चन्द्रमा के समान निर्मल एवं शुभ्र राजा नल के शौर्य आदि गुणों रूपी धागों से दिशारूपिणी स्त्रियों को ढ़कने वाले वस्त्रों से बुनती थी अर्थात् राजा नल के सैनिक युद्धक्षेत्र में अत्यन्त कुशलता से शत्रुओं पर प्रहार करते थे जिससे शत्रुओं का शीघ्र विनाश हो जाता था तथा उनका यश दिशाओं के अन्तराल भाग तक फैल जाता है । अर्थात् उनका यश दसों दिशाओं में व्याप्त था ।

अलङ्कार-छन्द—प्रकृत श्लोक में महान् तलवार में वेमा, भटचातुरी में तुरी, रण में, शौर्य आदि गुणों में तन्तुओं, दिशाओं में, अङ्गनाओं तथा यश में पट का आरोप किया गया है । अतः साङ्गरूपक अलङ्कार है तथा 'सितांऽशुवर्णैः' पद में उपमा अलङ्कार है ।

(9) प्रतीपभूपैरिव किं ततो भिया विरुद्धधर्मैरपि भेत्तृतोज्झिता ।
अमित्रजिन्मित्रजिदोजसा स यद्विचारदृक्चारदृगप्यवर्तत ।। 1/13

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ।।

प्रसंग—प्रकृत श्लोक में राजा नल के ओजस्विता अथवा तेज का वर्णन किया गया है । राजा नल के तेज के कारण विरोधी राजाओं ने ही नहीं वरन् परस्पर विरोधी स्वभावों ने भी पारस्परिक भेदभाव को समाप्त कर दिया है ।

अर्थ एवं भावार्थ—कवि कल्पना करता है कि क्या विरोधी राजाओं के समान परस्पर विरुद्ध स्वभावों ने भी उस राजा नल के भय से भेदभाव का त्याग कर दिया था । राजा नल शत्रुओं को जीतने वाले होकर भी मित्रजित् थे अर्थात् अपने शौर्य से सूर्य को भी जीतने वाले थे । राजा नल चारदृग होते हुए भी विचारदृग् थे अर्थात् गुप्तचरों के द्वारा राज्य के सम्पूर्ण कार्य-कलाप को देख लेने वाले होने पर भी विचारपूर्वक कार्य करते हैं । राजा नल सूर्य के समान तेजस्वी तथा दूतों द्वारा अन्य राजाओं तथा प्रजा का समाचार बराबर रखते थे ।

अलङ्कार-छन्द—प्रकृत श्लोक में 'मित्रजित्' होकर भी 'अमित्रजित्' थे चार दृग् होकर भी विचार दृग् थे । राजा नल में परस्पर विरोधी गुणों के समावेश के कारण यहाँ विरोधाभास अलङ्कार है ।

व्याख्या टिप्पणी— मित्रजित् = मित्रान् जयतीति मित्रजित्
अमित्रजित् = अभिभान् जयतीति अमित्रजित्
विचारदृक् = विचारेण पश्यतीति विचारदृक्
चारदृक् = चारैः पश्यतीति चारदृक् ।
शब्दार्थ—मित्रजित् = सूर्य को भी जीतने वाला,

अमित्रजित् = सूर्य पर विजय प्राप्त नहीं करने वाला, तथा अन्य अर्थ है शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाला ।

प्रतीपभूपैः = प्रतिकूल राजाओं के समान भूपैः पद तृतीया बहुवचन का है

अवर्त्तत् = वृत्त आत्मनेपद लङ् लकार प्र. पु. एकवचन ।

(10) जगज्जयं तेन च कोशमक्षयं प्रणीतवान्शैशवशेषवानयम् ।
सखा रतीशस्य ऋतुर्यथा वनं वपुस्तथाऽऽलिङ्गदथाऽस्य यौवनम् ।1/19

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रकृत श्लोक में राजा नल की युवावस्था के सौन्दर्य का वर्णन किया गया है ।

अर्थ—बाल्यावस्था का कुछ अवशेष रहने पर ही नल ने जगत् को जीत लिया तथा अपने कोष को कभी क्षय न होने वाला बना दिया । जिस प्रकार कामदेव का मित्र ऋतु वसन्त वन को आश्रय करता है, वैसे ही बाल्यावस्था के बीतने पर यौवन ने उनके शरीर का आश्रय लिया अर्थात् नल युवा हो गये ।

भावार्थ—बाल्यावस्था के थोड़ा अवशेष रहने पर ही राजा नल ने संसार पर विजय प्राप्त कर राज्य को शत्रु रहित बना लिया था और इस विजय से अपने खजाने को कभी समाप्त न होने वाला अर्थात् अक्षय बना डाला । युवावस्था के शनैः शनैः आगमन से राजा नल का सौन्दर्य अनुपम हो गया है । यहाँ श्रीहर्ष ने अत्यन्त सुन्दर उपमा दी है, यथा—जैसे वसन्त ऋतु के आगमन पर वन का सौन्दर्य निखर उठता है वैसे ही युवावस्था के आगमन से राजा नल का सौन्दर्य अद्भुत हो उठा है । अर्थात् राजा नल अत्यन्त सुन्दर हो गये हैं ।

अलङ्कार—प्रकृत श्लोक में उपमा अलङ्कार है ।

व्याख्या टिप्पणी—जगज्जयं = जगतां जयः, तम् (ष. त.)

रतीशस्य = रतेः ईशः तस्य (ष. त.)

प्रणीतवान् = प्र +√नी + क्तवतुः

अक्षययम् = अविद्यमान क्षयो यस्य तम् नञ् समास ।

शब्दार्थ— शैशवशेषवान् = बाल्यावस्था थोड़ी अवशिष्ट रह गयी थी ।

जगज्जयम् = सम्पूर्ण जग को जीत लिया था

अक्षयम् = कभी क्षय न होने वाला

रतीशस्य = रती का स्वामी

आलिङ्गत् = आलिङ्गन किया ।

(11) अधारि पद्मेषु तदङ्घ्रिणा घृणा क्व तच्छयच्छायलवोऽपि पल्लवे ।
तदास्यदास्येऽपि गतोऽधिकारितां न शारदः पार्विकशर्वरीश्वरः ।।1/20

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ।।

प्रसंग—प्रकृत श्लोक में राजा नल के असाधारण सौन्दर्य का वर्णन किया गया है ।

अर्थ—राजा नल के चरणों ने कमलों घृणा की । नल के पाणि की कान्ति का लेश भी पल्लव में कहाँ था । शरद् ऋतु की पूर्णिमा के चन्द्र उनके मुख के दास होने के लिए भी अधिकारी नहीं थे ।

भावार्थ—प्रस्तुत श्लोक में श्रीहर्ष ने राजा नल के अतिशय सौन्दर्य का वर्णन किया है । राजा नल के पैरों ने सुन्दरता में कमल की शोभा को भी जीत लिया है । नल के चरणों की दया के कारण कमल शोभा प्राप्त करते हैं । इस प्रकार मुझसे

हीन शोभावाले इन कमलों का मुझसे स्पर्धा किया जाना उचित नहीं है । नूतन पल्लव में नल के हाथ की कान्ति का थोड़ा सा अंश भी नहीं था । इसी प्रकार शरत्काल एवं पूर्णिमा का चन्द्रमा राजा नल के मुख के दासत्व के योग्य भी नहीं था । चन्द्रमा में 16 कलाएँ होती हैं जबकि राजा नल का मुख सदा स्मरणीय तथा 64 कलाओं से युक्त था ।

अलङ्कार—उपरोक्त श्लोक में चरण द्वारा कमल के प्रति घृणा किये जाने का वर्णन है जो असम्बन्ध में सम्बन्ध का कथन किये जाने से 'अतिशयोक्ति' अलङ्कार है । नल के चरण हाथ को कमल पल्लव से श्रेष्ठ बताया गया है यहाँ व्यतिरेक अलङ्कार भी है ।

व्याख्या टिप्पणी—शारदः = शरा भवः शारदः अण् प्रत्यय है ।
तच्छयच्छायलवः = तत्पुरुष समास—तस्य शयः तच्छयः
अधिकारित = अधिकारिन् + तल् +टाप् ।
शब्दार्थ—शारदः = शरद् ऋतु में उत्पन्न
पार्विक शर्वरीश्वर = पूर्णिमा का चन्द्रमा
आधिकारिताम् = योग्यता को

(12) **अमुष्य दोर्भ्यामरिदुर्गलुण्ठने ध्रुवं गृहीताऽर्गलदीर्घपीनता ।**
उरःश्रिया तत्र च गोपुरस्फुरत्कपाटदुर्धर्षतिरःप्रसारिता ॥ 1/22

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रकृत श्लोक में राजा नल के शारीरिक गठन की सुन्दरता का परिचय दिया गया है ।

अर्थ—नल की भुजाओं ने शत्रुओं के किलों को बलात्कार से ग्रहण करने में

अर्गला के समान लम्बाई और मुटाई को ग्रहण कर लिया है ऐसा प्रतीत होता है कि राजा नल के वंक्षस्थल की शोभा ने शहर के द्वार में प्रकाशमान कपाट के समान दुर्धुर्षता और तिरछी विस्तृतता को ग्रहण कर लिया है ।

भावार्थ—राजा नल की दोनों बाँहें शत्रुओं के किलों को लूटने में मानों अर्गला के समान विशाल तथा स्थूल हो जाती हैं । राजा नल के वक्षस्थल शत्रुओं के नगर द्वार पर विराजित किवाड़ों के समान दुर्जेय तथा विशाल हैं । तात्पर्य यह है कि राजा नल के बाहु तथा वक्षस्थल अत्यन्त विशाल हैं । वे आजानबाहु हैं ।

अलङ्कार—प्रस्तुत श्लोक में उत्प्रेक्षा अलङ्कार है ।

(13) सरोरुहं तस्य दृशैव निर्जितं, जिताः स्मितेनैव विधोरपि श्रियः ।
कुतः परं भव्यमहो महीयसी तदाननस्योपमितौ दरिद्रता ।। 1/24

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा "नैषधीयचरितम्" को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ।।

प्रसंग—राजा नल का सौन्दर्य अपूर्व है । चन्द्रमा और कमल को भी नल ने सौन्दर्य में जीत लिया है । अब तो संसार में कोई ऐसा पदार्थ ही नहीं रह गया है जिससे राजा नल के सौन्दर्य की उपमा दी जा सके । प्रकृत श्लोक में राजा नल के अद्भुत सौन्दर्य का वर्णन किया गया है ।

अर्थ—राजा नल के नेत्र ने सुन्दरता में कमल को जीत लिया है । उनकी मुस्कुराहट ने चन्द्रमा की सुन्दरता को जीत लिया है तथा उससे अधिक सुन्दर वस्तु कहाँ है ? बड़े अचरज की बात है कि राजा नल के मुख की उपमा में योग्यवस्तु का अत्यन्त अभाव है ।

भावार्थ—राजा नल की आँखें कमल से भी अधिक सुन्दर थीं । उनकी मुस्कुराहट चन्द्रमा की कान्ति से भी श्रेष्ठ थीं । संसार में चन्द्रमा तथा कमल को मुख

के सौन्दर्य की उपमा के लिए प्रयोग किया जाता है। राजा नल ने इन दोनों को जीत लिया है अतः अब ऐसा लगता है कि विश्व में नल की उपमा के लिए कोई पदार्थ ही नहीं है। तात्पर्य यह है कि राजा नल का मुख पूर्णतया अनुपम है।

अलङ्कार—उक्त श्लोक में नल के मुख ने शोभा में कमल तथा चन्द्रमा के ऊपर विजय प्राप्त कर ली है। तथा नल के सौन्दर्य को बताने के लिए उपमानों का अभाव हो गया है। अतः यहाँ काव्यलिङ्ग अलङ्कार है। उपमान से उपमेय अर्थात् कमल से राजा के मुख के सौन्दर्य में उत्कर्ष दिखाया गया है। अतः यहाँ व्यतिरेक अलङ्कार है।

व्याख्या टिप्पणी-शब्दार्थ—सरोरुहं = सरस् +√रुह् + क्विप्

कुतः = कस्मात् (कहाँ से)

तदाननस्य = नलस्य आननं—नल का मुख

उपमिति = उप +√मा +क्तिन्

महीयसी = मह् + ईयसुन् + ङीष् स्त्रीलिङ्ग (अत्यधिक)

विधोः = चन्द्रमा की

श्रियः = शोभा की।

(14) अदस्तदाकर्णि फलाढ्यजीवितं दृशोर्द्वयं नस्तदवीक्षि चाऽफलम्।
इति स्म चक्षुःश्रवसां प्रिया नले स्तुवन्ति निन्दन्ति हृदा तदाऽऽत्मनः ।1/28

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण-पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—राजा नल के सौन्दर्य से देवलोक, पृथिवीलोक की समस्त स्त्रियाँ प्रभावित हैं। प्रकृत श्लोक में राजा के सौन्दर्य से पाताल लोकस्थित नागस्त्रियों का कामविभ्रम प्रस्तुत किया गया है।

अर्थ—सर्पों की स्त्रियाँ ये हमारी दो आँखें नल के गुणों को सुनाती हैं। इसलिए इनका जीवन सफल है। परन्तु राजा नल को न देखने वाली होने से निष्फल भी हैं। इस प्रकार से सर्पों की स्त्रियाँ नल के विषय में अपनी आँखों की स्तुति और निन्दा भी करती है।

भावार्थ—पाताल लोक की स्त्रियाँ सोचती हैं कि हम लोगों के ये दोनों नेत्र उस राजा नल के चरित्र को सुनकर सफल जीवन तो हो गये परन्तु उस राजा नल का साक्षात् दर्शन नहीं कर सकतीं। इस प्रकार सर्पों की प्रियायें हृदय से क्रमशः अपने नेत्रों की कभी प्रशंसा तो कभी निन्दा करती थीं। नागों को 'चक्षुश्रवाः' कहा जाता है वे आँखों से ही देखती और सुनती हैं। वे पातालवासिनी होने के कारण तथा आँखों से न देखने के कारण राजा नल को नहीं देख सकती हैं इसलिए आँखों की निन्दा करती हैं। परन्तु चक्षु से सुनने के कारण नल के गुणों का श्रवण कर स्वयं को धन्य मानते हुए अपने चक्षुओं की प्रशंसा करती हैं।

अलङ्कार—उक्त श्लोक में अतिशयोक्ति अलङ्कार है तथा सफल जीवन वाले नेत्र निष्फल है इस प्रकार का विरोध का वर्णन होने से विरोधाभास अलङ्कार है।

व्याखा टिप्पणी—तदाकर्णि = तत्+ आ +√कर्ण + णिच् + णिनि

चक्षुःश्रवसाम् = चक्षूंषि एव श्रवांसि येषां ते चक्षुःश्रवसः (बहुव्रीहि समास)।

शब्दार्थ—चक्षुःश्रवसाम् = आँखें ही जिनके कान हैं अर्थात् जो आँखों से ही सुनते हैं।

हृदा = मन से

दृशोः द्वयम् = दोनों आँखों को

स्तुवन्ति स्म = प्रशसा करती थीं

निन्दन्ति स्म = निन्दा करती थीं

अफलम् = निष्फलम्

(15) यथोह्यगानः खलु भोगभोजिना प्रसह्य वैरोचनिजस्य पत्तनम्।
विदर्भजाया मदनस्तथा मनो नलाऽवरुद्धं वयसैव वेशितः॥ 1/32

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं।

'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रकृत श्लोक में दमयन्ती के मन राजा नल के प्रति स्नेह उत्पन्न कराया गया है।

अर्थ—जिस प्रकार सर्प के शरीर को खाने वाले पक्षी गरुड़ ने ही अग्नि से घिरे हुए बाणासुर के नगर शोणितपुर में प्रद्युम्न को बल से प्रवेश कराया उसी प्रकार सुख का अनुभव करने वाली युवावस्था ने ही सखी जनों से तर्कित कामदेव को नल की चिन्ता करने वाली दमयन्ती के मन में बल से प्रवेश कराया।

भावार्थ—प्रकृत श्लोक में एक पौराणिक कथा का उद्धरण दिया गया है।

असुराधिपति बाणासुर की पुत्री उषा ने रात्रि स्वप्न में श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध को देखा। प्रातः उठकर उषा ने यह स्वप्न अपनी सखी चित्रलेखा को बताया। चित्रलेखा ने अपने योगबल के द्वारा द्वारिकापुरी में सोते हुए अनिरुद्ध को लाकर राजकुमारी उषा के साथ मिलन करवाया। इस घटना को जानकर बाणासुर क्रुद्ध हो उठा तथा अनिरुद्ध को बाँध कर डाल दिया। नारद ने यह समाचार श्रीकृष्ण को सुनाया। श्रीकृष्ण ने बलराम तथा प्रद्युम्न के साथ गरुड़ पर आरूढ़ होकर बाणासुर के नगर शोणितपुर में पहुँचे। वह नगरी चारों ओर से अग्नि से घिरी हुई थी। वहाँ युद्ध कर श्रीकृष्ण से बाणासुर को परास्त किया तथा अनिरुद्ध का उद्धार किया।

श्रीहर्ष ने इस घटना को उद्धरण देते हुए सिद्ध किया है कि दमयन्ती के हृदय में युवावस्था की सहायता से राजा नल के प्रति काम प्रेम उत्पन्न करने हेतु कामदेव प्रविष्टि हो गया।

अलङ्कार—प्रकृत श्लोक में 'श्लेष' अलङ्कार है। 'यथोह्यमानः' 'मनोनलः' पद में शब्दश्लेष तथा 'वयसा', 'भोगभोजिना' शब्दों में अर्थश्लेष है।

व्याख्या टिप्पणी—भोगभोजिना = भोग + √भुज् + णिनि
भोगंभोक्तुं = शीलमस्य इति भोगभोजी तेन।
ऊह्यमानः = वह + लट् + यक् + शानच् (प्रद्युम्न पक्ष में)
ऊट् + लट् + यक् + शानच् (कामदेव के अर्थ में)

अनलावरुद्धम् = अनलेन अवरुद्धं इति तृतीया तत्पुरुष समास है ।

वेशितः = विश् + णिच् + क्त

शब्दार्थ—भोगभोजिना = साँप के शरीर को खाने वाले अथवा विषम-सुखों को भोगने वाले

वयसा = गरुड़ पक्षी तृतीय एकवचन अथवा युवावस्था के द्वारा

ऊह्यमानः = ले जाये जाते हुए (प्रद्युम्न के पक्ष) में अथवा जाना जाता हुआ (कामदेव के पक्ष में)

मदनः = कामदेव

प्रसह्य = जबरदस्ती या बलपूर्वक

वेशितः = प्रविष्ट कराया गया ।

(16) निमीलितादक्षियुगाच्च निद्रया हृदोऽपि बाह्येन्द्रियमौनमुद्रितात् ।
अदर्शि सङ्गोप्य कदाऽप्यवीक्षितो रहस्यमस्याः स महन्महीपतिः ॥1/40

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रकृत श्लोक में निद्रा द्वारा राजकुमारी दमयन्ती को राजा नल का दर्शन कराया गया । दूसरे शब्दों में इस प्रकार कहा जा सकता है कि राजकुमारी दमयन्ती ने राजा नल को स्वप्न में देखा ।

अर्थ—निद्रा से बन्द दोनों नेत्रों से बाह्य इन्द्रिय के व्यापारभाव से निष्क्रिय हृदय से भी छिपाकर कभी भी नहीं देखे गये, अत्यन्त गोपनीय महाराज नल को निद्रा ने दमयन्ती को दिखाया ।

भावार्थ—जिस प्रकार कोई चतुर दूती अथवा घनिष्ठा सखी नायिका को अन्य लोगों से छिपाकर अपनी सखी के इष्ट नायक अथवा प्रेमी का दर्शन करा देती है उसी प्रकार निद्रा ने भी दमयन्ती के इष्ट नल का स्वप्न में दर्शन करा दिया । यतः

निद्रा में सभी इन्द्रिया मन में लीन हो जाती हैं अतः हृदय को भी इसका पता नहीं चल सका ।

अलङ्कार—प्रकृत श्लोक में रूपक अलङ्कार है ।

व्याख्या टिप्पणी—निमीलितात् = नि + मील + क्तः

अक्षियुगात् = अक्ष्णोः युगं तस्मात् (षष्ठी तत्पुरुष)

अवीक्षितः = न वीक्षितः (नञ् समास)

महीपति = मह्याः पतिः (ष. त.)

अदर्शि = दृश् + णिच् + लुङ् ।

शब्दार्थ—निद्रया= निद्रा के द्वारा

निमीलितात् = बन्द हुयी

अक्षियुगात् = आँखों से

संगोप्य = छिपा कर

अदर्शि = दिखला दिया लुङ् लकार

हृदः = मन से ।

(17) अमुष्य धीरस्य जयाय साहसी तदा खलु ज्यां विशिखैः सनाथयन् ।
निमज्जयामास यशांसि संशये स्मरस्त्रिलोकीविजयार्जितान्यपि । 1/45

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रस्तुत श्लोक में राजा नल के मन में दमयन्ती के प्रति अनुराग हो जाने से उनका मन काम पीड़ित हो गया है । कामदेव ने राजा के धैर्य को नष्ट करने हेतु अपने धनुष की डोरी को कान तक खींचा । कामदेव राजा नल पर विजय प्राप्त करना चाहते हैं, इसी अवस्था का वर्णन श्रीहर्ष ने इस श्लोक में किया है ।

अर्थ—साहसी कामदेव ने धैर्यशाली नल को जीतने के लिए उस समय प्रत्यञ्चा में बाणों को चढ़ाकर तीनों लोकों की जीत अर्जित किये हुए अपने यश को संशय में डाल दिया।

भावार्थ—अद्वितीय धैर्य वाले राजा नल पर विजय प्राप्ति की इच्छा से कामदेव ने धनुष की प्रत्यञ्चा को चढ़ाया। राजा नल को जीतना कामदेव के लिए दुष्कर कार्य था, इसीलिए साहसी विशेषण कामदेव के साथ प्रयुक्त किया गया है। दुष्कर कार्य को न कर पाने की स्थिति में कामदेव का तीनों लोकों को जीतने से प्राप्त यश भी समाप्त हो सकता है।

अलङ्कार—प्रस्तुत श्लोक में कामदेव के उक्त संशय से सम्बन्ध न होने पर भी सम्बन्ध का प्रतिपादन होने से अतिशयोक्ति अलङ्कार है।

व्याख्या टिप्पणी—त्रिलोकी = त्रयाणां लोकानां समाहारः द्विगु समास
जयाय = चतुर्थी विभक्ति एकवचन
सनाथयन् = नाथैः सहिता सनाथा शतृ प्रत्यय।

शब्दार्थ—अमुष्य = इस राजा नल के
धीरस्य = धैर्यवान्
जयाय = जीतने के लिए
ज्याम् = डोरी को
साहस = साहस युक्त
स्मरः = कामदेव
यशांसि = यश को

(18) फलेन मूलेन च वारिभूरुहां मुनेरिवेत्थं मम यस्य वृत्तयः।
त्वयाऽद्य तस्मिन्नपि दण्डधारिणा कथं न पत्या धरणी ह्णीयते। 1/133

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—राजा नल द्वारा वन में जाकर सरोवर में विहार कर रहे हंस को ग्रहण कर लेने पर हंस राजा को धिक्कारता है ।

अर्थ—हे राजन् जल और वृक्षों से उत्पन्न कन्द और फल से मुनि के समान मेरी वृत्ति है अर्थात् इन्हीं से मेरी आजीविका चलती है । उसको भी दण्ड धारण करने वाले आप जैसे राजा से इस समय पृथ्वी लज्जित क्यों नहीं होती ।

भावार्थ—दुष्टों को दण्ड देना राजा का धर्म है साथ ही सज्जनों को कष्ट न पहुँचना भी राजा का धर्म है । परन्तु राजा ने हंस को पकड़ लिया है । जबकि वह हंस दुष्ट नहीं अपितु मुनियों के समान कन्द मूलादि से जीवनयापन करने वाला है । अतः वह दया तथा संरक्षण का पात्र है परन्तु राजा ने उस पर दण्ड का प्रयोग किया है अर्थात् उसे पकड़ लिया है । मुझ जैसे निरपराध को दण्ड देने के कारण क्या आज पृथिवी आप जैसा पति पाकर लज्जा अनुभव नहीं करेगी । पृथ्वी अवश्य लज्जित व दुःखी होगी ।

अलङ्कार—प्रकृत श्लोक में उपमा अलङ्कार है । हंस की तुलना मुनियों से की गई है तथा साधर्म्य उनकी वृत्ति में है ! प्रकृत श्लोक में वंशस्थ छन्द है ।

टिप्पणी—वारिभूरुहां = वारिभ् + रुह्+ क्विप् षष्ठी बहुवचन
दण्डधारिणा = दण्डं धारयतीति ।

शब्दार्थ—इत्थम् = इस प्रकार (अव्यय)
फलेन मूलेन = फल मूल तृतीया एकवचन
वृत्तयः = जीविका
दण्डधारिणा = दण्ड धारण करने वाले
अद्य = आज (अव्यय) ह्णीयते—लज्जित होती (आत्मनेपदी) ।

(19) मदेकपुत्रा जननी जराऽऽतुरा, नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी ।
गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दयन्नहो ! विधे ! त्वां करुणा रुणद्धि नो ॥ 1/135

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके

काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—उद्धृत श्लोक नैषध के सुन्दरतम श्लोकों में से एक है। हंस के चरित्र-चित्रण में श्रीहर्ष ने अद्भुत विद्वता का परिचय दिया है। हंस राजा द्वारा पकड़ लिये जाने पर अत्यन्त करुण शब्दों में भाग्य को उलाहना देता हुआ कहता है।

अर्थ—हे भाग्यविधाता ब्रह्मदेव ! मैं अपनी वृद्धा माता का एकमात्र पुत्र हूँ। मेरी पत्नी नव प्रसव वाली अर्थात् शीघ्र ही बच्चे को जन्म देने वाली है। मैं ही एकमात्र उन दोनों का सहारा हूँ। ऐसे मुझ को पीड़ित करते हुए, मारते हुए क्या करुणा तुमको नहीं रोकती है ?

भावार्थ—हंस विधाता को उलाहना देते हुए कहता है हे भाग्य, अपनी बूढ़ी माता तथा नूतन प्रसववाली मेरी पत्नी दोनों का मैं एकमात्र सहारा हूँ ऐसी अवस्था में भी तुम्हें मुझे मारते हुए दया नहीं आती। माता और पत्नी का एकमात्र सहारा हंस है, उसके मृत्यु से उन दोनों की स्थिति दयनीय हो जायेगी। अतएव हे ब्रह्मदेव दया करो।

अलङ्कार—प्रकृत श्लोक में परिकर अलङ्कार तथा वंशस्थ नामक छन्द है। अलङ्कार का लक्षण है—'उक्तैविशेषणै साऽभिप्रायैः परिकये मतः'। (साहित्य दर्पण)

यह श्लोक करुणा रस तथा प्रसाद गुण से परिपूर्ण है।

व्याख्या-टिप्पणी—मदेकपुत्रा = अहम् एव एकः पुत्रः यस्याः सा (बहुब्रीहि समास);

नवप्रसूतिः = नवा प्रसूतिः, नूतनाः प्रसूतिः यस्याः सा (बहुब्रीहि समास)

जरातुरा = जरया आतुरा (तृतीया तत्पुरुष)।

शब्दार्थ—मदेकपुत्रा = मैं एकमात्र पुत्र हूँ जिसका

जरातुरा = वृद्धा अवस्था वाली

वरटा = हंसी

अर्दयन् = सताते हुये

रुणद्धि = रोकती है

तपस्विनी = पतिव्रता।

(20) मुहूर्तमात्रं भवनिन्दया दयासखाः सखायः स्रवदश्रवो मम ।
निवृत्तिमेष्यन्ति परं दुरुत्तरस्त्वयैव मातः! सुतशोकसागरः॥ 1/136

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण-पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—राजा द्वारा ग्रहण कर लिये जाने पर हंस विलाप करते हुए, अपने मृत्यु के अनन्तर अपने मित्रों तथा माता के दुःखों का वर्णन करता है ।

अर्थ—हे जननी, मेरे दयालु मित्र अश्रुधारा बहाते हुए क्षण भर के लिए 'यह संसार अनित्य है, जीवन क्षणभंगुर है' इत्यादि रूप से जगत् की निन्दा करके शान्त हो जायेंगे परन्तु तुम्हारें लिए पुत्र शोकरूपी सागर पार करना अत्यन्त कठिन हो जायेगा ।

भावार्थ—मित्रों का दुःख माता के दुःख की अपेक्षा कम होगा । मित्र थोड़ी देर के लिये अश्रु बहायेंगे तथा यह कहेंगे कि 'संसार अनित्य है हाँ उत्पन्न होने वाले का अन्त होता ही है, सबकी यही गति है, काल किसी को नहीं छोड़ता' इस प्रकार विचारकर थोड़ी देर बार दुःख भूल जायेंगे । परन्तु माता के लिए पुत्रशोक सागर पार करना अत्यन्त कठिन होगा । वस्तुतः संसार में माता-पिता के सामने पुत्र का जाना सबसे बड़ा दुःख है । माता का अवशिष्ट सम्पूर्ण जीवन दुःख तथा कष्ट से परिपूर्ण हो जायेगा अर्थात् माता का दुःख मित्रों के दुःख से बहुत अधिक होगा ।

अलङ्कार एवं छन्द—प्रस्तुत श्लोक में रूपक अलङ्कार तथा वंशस्थ छन्द है । 'सुतशोकसागरः' पुत्र शोक को सागर कहा गया है अतः इस श्लोक में 'रूपक' अलङ्कार है ।

टिप्पणी—दयासखायः = दयायाः सखायः, षष्ठी तत्पुरुष
भवनिन्दया = भवस्य निंदा तया, तृतीया तत्पुरुष
सुतशोकसागरः = सुतस्य शोकः षष्ठी तत्पुरुष ।

शब्दार्थ—मुहूर्तमात्रम् = क्षणभर के लिए
भवनिन्दया = संसार निन्दा द्वारा
निवृत्तिम् ऐषयन्ति = दुःख से निवृत्ति प्राप्त कर लेंगे
दुरुत्तरः = दुःख के साथ पार करने योग्य ।

॥ इति प्रथम सर्ग व्याख्या ॥

द्वितीय सर्ग

**(21) नृपमानसमिष्टमानसः स निमज्जत्कुतुकाऽमृतोर्मिषु ।
अवलम्बितकर्णशष्कुलीकलसीकं रचयन्नवोचत ॥ 2/8**

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—द्वितीय सर्ग में राजा के द्वारा पकड़े गये हंस को छोड़ दिये जाने पर हंस राजा नल के प्रति आश्चर्य अनुभव करता है ।

अर्थ—मानससरोवर की इच्छा करने वाला वह हंस कौतुक रूप अमृत की तरङ्गों में डूबते हुए राजा के मन में कर्णशष्कुली रूप कलसों का अवलम्बन कराता हुआ बोला ।

भावार्थ—हंस मानससरोवर में विशेष रूप से पाये जाते हैं । महाकवि कालिदास ने भी मानससरोवर के हंसों का उल्लेख किया है । वाल्मीकि रामायण में कहा गया है कि ब्रह्मा जी के मन से उत्पन्न सरोवर को मानससरोवर कहते हैं । मानस, सरोवर की अभिलाषा रखने वाले उस हंस ने जिस प्रकार जल में डूबते हुए व्यक्ति को जैसे घड़े का सहारा होता है उसी प्रकार कौतुक रूप अमृत में डूबते हुए नल को बचाने के लिए कर्णरूप शुष्कलों का सहारा देते हुए बोला ।

अलङ्कार—प्रस्तुत श्लोक में 'उपमा' और रूपक की संसृष्टि है । यहाँ वियोगिनी नामक छन्द है ।

व्याख्या टिप्पणी—निमज्जत् = नि + मस्ज् + लट् (शतृ) + अञ्

नृपमानसं = नृपस्य मानसं तत् (ष. त.)

रचयन् = रच् + णिच् + लट् (शतृ)

अवोचत = वच् + लुङ् + त ।

शब्दार्थ—इष्ट मानसः = मानससरोवर प्रिय इष्ट है जिसका

कुतुकाऽमृतोर्मिषु = कौतुक रूप अमृत की तरङ्गों में

निमज्जत् = डूबते हुए

नृपमानसं = राजा नल के मन में ।

(22) पतगेन मया जगत्पतेरुपकृत्यै तव किं प्रभूतये ।
इतिं वेद्मि न तु त्यजन्ति मां तदपि प्रत्युपकर्तुमर्तयः ॥ 2/13

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस कांव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—प्रस्तुत श्लोक में हंस अत्यन्त सुन्दर शब्दों में राजा के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता है । श्रीहर्ष ने हंस के रूप में अद्भुत पात्र की कल्पना की है ।

अर्थ—मैं सामान्य पक्षी हे राजन् ! आपके प्रति उपकार के लिए कैसे समर्थ हो सकूँगा, यह मैं जानता हूँ तथापि प्रत्युपकार के लिए उत्कण्ठा रूप पीड़ायें तो मुझे आपके उपकार का बदला देने के लिए नहीं छोड़ती हैं ।

भावार्थ—हंस पक्षी होने पर भी कर्त्तव्य, अकर्त्तव्य को जानने वाला है । राजा द्वारा छोड़ दिये जाने को उपकार मानते हुए वह राजा के प्रत्युपकार के लिए व्यग्र हो रहा है । यद्यपि वह अपनी शक्ति से भी परिचित है, तभी तो कहता है कि मैं

अदना पक्षी आपका क्या उपकार कर सकता हूँ ? तथापि मेरा मन आपके उपकार को चुकाने के लिए उत्कण्ठित है ।

इस श्लोक के माध्यम से श्रीहर्ष ने भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ मूल्यों का पोषण किया है । मानवीय भाव पक्षी में भी दिखाई दे रहा है ।

अलङ्कार—प्रकृत श्लोक में छेकाऽनुप्रास अलङ्कार तथा वियोगिनी छन्द है ।

टिप्पणी-शब्दार्थ—जगत्पतेः + जगतः पतिः (ष. त. समास)

उपकृत्यै = उप + √कृ + क्तिन् चतुर्थी एकवचन

प्रभूयते = प्र + भू. + लट्

प्रत्युपकर्तुं = प्रति + उप + कृ + तुमुन्

मया = अस्मद्, तृतीया एकवचन

पतगेन मया = मैं पक्षी

जगत्पतेः = संसार के स्वामी

प्रभूयते = समर्थ होऊँगा

वेद्मि = जानता हूँ ।

(23) त्वयि वीर ! विराजते परं दमयन्तीकिलकिञ्चितं किल ।
तरुणीस्तन एव दीप्यते मणिहारावलिरामणीयकम् ।। 2/44

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरित्रतम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं । 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ।।

प्रसंग—हंस राजा के हृदय में दमयन्ती के प्रति उत्कण्ठा जाग्रत करना चाहता है । इसलिए दमयन्ती के अनिन्द्य सौन्दर्य का वर्णन करता है ।

अर्थ—हे वीर ! दमयन्ती की शृङ्गार चेष्टाएँ आप में ही शोभित होती हैं । मोती की मालाओं का सौन्दर्य तरुणी के स्तन पर ही शोभित होता है ।

भावार्थ—हंस राजा नल को ही दमयन्तीं के योग्य मानता है । इसलिए कहता है कि मोती की मालाएँ जिस प्रकार युवती के हृदय पर शोभित होती हैं उसी प्रकार दमयन्ती की शृङ्गार की समस्त चेष्टाएँ आप में ही शोभित होती हैं । अर्थात् दमयन्ती के योग्य आप ही हैं कोई अन्य नहीं ।

अलङ्कार-छन्द—उद्धृत श्लोक में उपमान और उपमेय हार और 'किल किञ्चितका' दो वाक्यों में बिम्ब और प्रतिबिम्ब भाव से 'स्तन' और 'नृप' में तुल्यधर्मता से उक्ति होने से दृष्टान्त अलङ्कार है । उसका लक्षण निम्न है :

'दृष्टान्तस्तु सधर्मस्य वस्तुनः प्रतिबिम्बनम्ः' यहाँ वियोगिनी नामक छन्द है।

टिप्पणी—मणिहारावलि = हाराणाम् आवलिः (ष. त.)

तरुणीस्तने = तरुण्याः स्तनः तस्मिन् (ष. त.)

दीप्यते = दीपी दीप्तौ

त्वयि—युष्मद्, सप्तमी. एकवचन

विराजते—वि + रज् आ.पद लट्, प्र. पु. एकवचन ।

(24) तव सम्मतिमत्र केवलामधिगन्तुं धिगिदं निवेदितम् ।
ब्रुवते हि फलेन साधवो न तु कण्ठेन निजोपयोगिताम् ।। 2/48

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है । इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है । श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं । उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं । विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ।।

प्रसङ्ग—हंस नल के द्वारा छोड़ दिये जाने पर प्रत्युपकार करना चाहता है। इस अभिप्राय की सिद्धि के लिए वह नल से कहता है कि मैं दमयन्ती के समीप जाकर ऐसी प्रशंसा करूँगा कि दमयन्ती का चित्र आप में अनुरक्त हो जायेगा । इस कार्य को व्यावहारिक रूप प्रदान करने के लिए वह नल से सम्मति लेना चाहता है।

अर्थ—(दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेम उत्पन्न करने के लिए) इस

कार्य में केवल आपकी सम्मति को जानने के लिए किये गये इस निवेदन को धिक्कार है, क्योंकि सज्जन लोग अपनी उपयोगिता को कार्य से दिखाते हैं, कण्ठ से नहीं बताते।

भावार्थ—नल के प्रति प्रत्युपकार को उद्यत हंस दमयन्ती के मन में नल के लिए प्रेम उत्पन्न करना चाहता है। वह कहता है कि आपकी इच्छा को जानने के लिए मैंने यह निवेदन किया है परन्तु इस निवेदन को धिक्कार है, क्योंकि मैं सज्जनों के विपरीत आचरण कर रहा हूँ। सज्जन लोग अपनी उपयोगिता को कार्य से दिखाते हैं, कण्ठ से नहीं बताते।

अलङ्कार एवं छन्द—यहाँ सामान्य से विशेष का समर्थन किया गया है, अतः यहाँ 'अर्थान्तरन्यास' अलङ्कार है। इस श्लोक में वियोगिनी नामक छन्द है।

टिप्पणी—अधिगन्तुम् = अधि + √गम् + तुमुन्

निजोपयोगितां = निजस्य उपयोगिताम् (ष. तत्पुरुष)

फलेन = कार्येण कार्य माध्यमेन

कण्ठेन = वाग्व्यापारेण

साधवः = सज्जनाः।

(25) परिमृज्य भुजाऽग्रजन्मना पतगं कोकनदेन नैषधः।
मृदु तस्य मुदेऽगिरद् गिरः प्रियवदामृतकूपकण्ठजा ॥ 2/50

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसङ्ग—हंस द्वारा स्व-अभिलाषित इच्छा की पूर्ति हो गई यह जानकर नल श्वेत मन्द-हास करते हैं तथा हंस से कहते हैं। उसी का वर्णन प्रकृत श्लोक में किया गया है।

अर्थ—नल बाहु के अग्रभाग से उत्पन्न पाणिरूप रक्तकमल से हंस का स्पर्श करके उसको हर्ष उत्पन्न करने के लिए प्रिय वचनरूप अमृत के कुएँ के समान कण्ठ से उत्पन्न वचनों को कोमलतापूर्वक कहने लगे।

भावार्थ—हंस द्वारा अपनी इच्छा को पूर्ण होता देखकर राजा नल प्रेम सहित हंस को स्पर्श करते हैं तथा उसे प्रसन्न करने हेतु प्रियवचनरूप अमृत कूप के समान कण्ठ से उत्पन्न वचनों को कोमलतापूर्वक कहने लगे। लोक में भी देखा जाता है की मन द्वारा इच्छित कार्य की पूर्ति जिसके द्वारा होती है देखकर उसके प्रति व्यक्ति प्रेम-भाव वाला हो जाता है। राजा नल भी इसी प्रकार हंस के प्रति प्रेम प्रकट कर रहे हैं।

अलङ्कार एवं छन्द—प्रकृत श्लोक में पाणि में रक्त कमल का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है। इस श्लोक में 'वियोगिनी' नामक छन्द है।

टिप्पणी—परिमृज्य = परि + √मृज् + क्त्वा (ल्यप्)

भुजाऽग्रजन्मना = भुजस्य अग्रम् (ष. त.)।

शब्दार्थ—अगिरत् = √गृ धातु लङ् लकार प्रथमपुरुष एकवचन

पतगं = पक्षिणं हंसम्

मृदु = कोमल

गिरः = वाणी।

(26) **भृशतापभृता मया भवान् मरुदासादि तुषारसारवान्।**
धनिनामितरः सतां पुनर्गुणवत्सन्निधिरेव सन्निधिः॥ 2/53

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरित्रतम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः?॥

प्रसंग—प्रकृत श्लोक में राजा नल हंस की प्रशंसा कर रहे हैं। हंस द्वारा प्रेम

याचना में सहायता पाकर उसके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने हेतु राजा हंस की प्रशंसा कर रहें हैं।

अर्थ एवं भावार्थ—राजा कामदेव की अग्नि से संतप्त हो रहे हैं, तथा हंस द्वारा सहायता किये जाने पर उन्हें ऐसी प्रतीति हो रही है कि अत्यन्त संतप्त मैंने हिम के श्रेष्ठ अंश से सम्पन्न वायु के समान तुम्हें प्राप्त कर लिया है। तात्पर्य यह है कि हंस द्वारा किया गया उपकार राजा के संतप्त हृदय को शीतल वायु के समान सुख दे रहा है। धन के स्वामी कुबेर की निधि पद्म, शङ्ख आदि हैं परन्तु विद्वान् पुरुषों के लिए गुणी पुरुषों का सामीप्य ही श्रेष्ठ निधि है।

अलङ्कार एवं छन्द—प्रकृत श्लोक के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध में रूपक अलङ्कार है। यहाँ वियोगिनी नामक छन्द है।

टिप्पणी—तुषारसारवान् = तुषाराणां साराः षष्ठी तत्पुरुष
तुषारसार + मतुप् + सु
आसादि = आङ् + सद् + णिच् + लुङ् + त
धनिनां = धन + इनि + आम्।

शब्दार्थ—तुषारसाखान् = हिम के श्रेष्ठ अंश से सम्पन्न
मरुत = वायु
सतां = विद्वान्
इतरः = अन्य (अव्यय)।

(27) तव वर्त्मनि वर्ततां शिवं, पुनरस्तु त्वरितं समागमः।
अपिसाधय साध्येप्सितं स्मरणीयाः समये वयं वयः॥ 2/62

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः?॥

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में दमयंती के पास जाने को उद्यत हंस के प्रति राजा अपनी शुभकामना व्यक्त करते हैं।

अर्थ एवं भावार्थ—राजा हंस के गमन पूर्व शुभकामना व्यक्त करते हुए कहते हैं कि हे हंस ! तुम्हारा मार्ग मङ्गलमय हो। शीघ्र तुम्हारे साथ पुनः मिलाप हो अर्थात् शीघ्र ही तुम हमारी प्रिया तक हमारा संदेश पहुँचा कर, शुभ समाचार लाकर हमसे मिलो। मेरे अभीष्ट को शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण करो। उचित अवसर आने पर मेरा स्मरण करना।

प्रकृत श्लोक नैषध के पदलालित्य का अद्‌भुत उदाहरण है। यहाँ अधिक अर्थों का संक्षेप होने कारण 'ओज' नामक काव्य लक्षण है।

अलङ्कार एवं छन्द—प्रस्तुत श्लोक में छेकानुप्रास अलङ्कार है। यहाँ वियोगिनी नामक छन्द है।

टिप्पणी—ईप्सितं = आप्तुम्, इष्टं ईप्सितम्

स्मरणीयाः = स्मर्तुं योग्याः

अपिसाधय = अपि + साध् + णिच् + लोट् +सिप्।

शब्दार्थ—त्वरितं = शीघ्रातिशीघ्र

शिवं = कल्याण

ईप्सितं = अभीष्ट।

(28) तनुदीधितिधारया रयाद् गतया लोकविलोकनामसौ।
छदहेम कषन्निवाऽलसत् कषपाषाणनिभे नभस्तले॥ 2/69

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणींय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्‌भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः?॥

प्रसंग—प्रकृत श्लोक में हंस के अद्वितीय सौन्दर्य का वर्णन किया है।

अर्थ—राजा के द्वारा मार्ग मंगलमय हो आदि कहने पर हंस ने दमयन्ती के पास प्रस्थान किया। वह हंस अत्यन्त वेग से जा रहा है। मार्ग में हंस के शरीर से निकलने वाली किरणें मार्ग को सुनहली बना रही हैं, प्रकाशित कर रही हैं। ऐसा प्रतीत होता है 'हंस' का स्वर्णरूपी पंख कसौटी पर घिसा जा रहा है। हंस के पंख स्वर्ण के समान आभा दे रहे हैं।

यहाँ हंस को वेगशाली तथा अद्वितीय सौन्दर्य वाला बताया गया है।

अलङ्कार एवं छन्द—प्रकृत श्लोक में 'कषपाषाणनिभे' में उपमा तथा 'कषन् इव' में उत्प्रेक्षा अलङ्कार है। यहाँ दो अलङ्कारो का अङ्गाङ्गिभाव होने से सङ्कर अलङ्कार है। यहाँ वियोगिनी नामक छन्द है।

टिप्पणी—लोकविलोकनाम् = लोकानां विलोकणा। (षष्ठी तत्पुरुष)

तनुदीधितिधारया = तनोःदीधितिः (षष्ठी तत्पुरुष)

कषन् = कष् + लट् (शतृ)।

शब्दार्थ—रयात् = वेग से;

नम्भस्तले = आकाश में

अलसत् = शोभित हुआ,

कषन् = घिसते हुए

छदहेम = अपने पंख के सुवर्ण।

(29) न वनं पथि शिश्रियेऽमुना क्वचिदप्युच्चतरद्रुचारुतम्।
न सगोत्रजमन्ववादि वा गतिवेगप्रसरद्रुचारुतम्। 2/72

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण-पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसङ्ग—राजा के कार्य को पूरा करता हुआ हंस के सेवक धर्म की यहाँ

प्रशंसा की गई है। कुण्डिनपुरी को प्रस्थान करता हुआ हंस मार्ग में कहीं क्षण भर को विश्राम नहीं करता है। महाकवि ने यहाँ हंस के कर्त्तव्यभाव की विशेषता का उल्लेख किया है।

सरलार्थ—हंस के गमन के वेग से अद्भुत कान्ति निकल रही है। वेग से उड़ता हुआ हंस मार्ग में किसी वन में, उन्नत सघन वृक्ष पर भी क्षण-मात्र को न रुका। अपने बन्धुजनों हंसों के कूजन का भी कोई उत्तर नहीं दिया। अपने स्वामी के कार्य की सिद्धि को ही उसने अपना लक्ष्य बना रखा है।

अलङ्कार एवं छन्द—प्रकृत श्लोक में वियोगिनी छन्द तथा अन्त्य यमक अलङ्कार है।

टिप्पणी—सगोत्रजं = समानं गोत्रं येषां ते सगोत्राः—यहाँ बहुब्रीहि समास है।

चारुता = चारु + तल् + टाप्

क्वदित् + अपि + उच्चतरद्रु + चारुतम्।

शब्दार्थ—अमुना = इस हंस के द्वारा

पथि = राह में

वनं = जंगल

न शिश्रिये = आश्रय नहीं लिया

(30) नृपनीलमणीगृहत्विषामुपधेर्यत्र भयेन भास्वतः।
शरणाप्रमुवास वासरेऽप्यसदावृत्युदयत्तमं तमः॥ 2/75

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः?॥

प्रसङ्ग—राजा नल के प्रति उपकार करने के लिए भैमी के साथ विवाह का प्रस्ताव रखने हेतु जाता हुआ हंस मार्ग में अलौकिक सौन्दर्यसम्पन्न कुण्डिनपुरी नगरी

का सौन्दर्य देखता है। यहाँ हंस के मुख से कवि ने कुण्डिनपुरी नगरी के अप्रतिम सौन्दर्य, वैभव का वणर्न किया है।

अर्थ एवं भावार्थ—कुण्डिनपुरी नगर में अन्धकार सूर्य के भय से राजा भीम के इन्द्रनील मणियों से बने हुए भवनों के बहाने से भवन के भीतर रहता है। दिन में भी नहीं लौटता हुआ गाढ़ होकर रहता था। यहाँ कवि ने कुण्डिनपुरी में ऊँचे-ऊँचे स्फटिक मणियों से बने भवनों का वर्णन किया है। यहाँ दिन में भी सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँचता तथा अंधकार छाया रहता है।

छन्द-अलङ्कार—प्रकृत श्लोक में अन्धकार में कार्य के द्वारा शरणार्थी जन के व्यवहार का समारोप होने से समासोक्ति और उदात्त अलङ्कार है। यहाँ वियोगिनी नामक छन्द है।

टिप्पणी—उदयत्तमम् = उद् + इण् + लट् (शतृ)

उदयत् + तमप् = उदयत्तमम्

उवास = वस् + लिट् + तिप्

शरणाप्तं = शरणम्—आप्तम्

असदावृत्तिः = न सती असती, नञ् समास असती आवृत्तिर्यस्य तत्,

(31) दधदम्बुदनीलकण्ठतां वहदत्यच्छसुधौज्ज्वलं वपुः ।
कथमृच्छतु यत्र नाम न क्षितिभृन्मन्दिरमिन्दुमौलिताम् ॥ 2/82

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरित्रतम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसंग—पूर्ववत् ।

अर्थ एवं भावार्थ—प्रकृत श्लोक में कुण्डिनपुरी के समान चन्द्रशेखर अर्थात् शिव से दिखाई गई है। कुण्डिनपुरी में मेघों से श्याम कण्ठवाला अत्यन्त निर्मल

चूने से उज्ज्वल शरीर धारण करने वाला राजा का महल शिर पर चन्द्र को धारण करने वाले चन्द्रशेखर के भांव को क्यों नहीं प्राप्त करेगा ? अर्थात् अवश्य करेगा। राजभवन अत्यन्त ऊँचा है तभी तो इसकी चोटी के समीप मेख की उपस्थिति से नीलकण्ठ के समान दिखाई देता है।

छन्द-अलङ्कार—प्रकृत पद्य में वियोगिनी छन्द है तथा राजभवन का इन्दुमौलिख के साथ सम्बन्ध न होने पर भी सम्बन्ध के कथन होने से अतिशयोक्ति अलङ्कार है।

व्याख्या टिप्पणी—अम्बुदाः=अम्बुं ढढतीति अम्बुदाः (उपपद तत्पुरुष)

नीलकृण्ठ = नीलंः क्रण्ठो यस्य सः (बहुब्रीहि समास)

दधत् = धा + लट् + शतृ।

शब्दार्थ—अत्यच्छसुधयाउज्ज्वलम्=अत्यन्त निर्मल चूने के लेप से उज्ज्वल भवन

वहन् = वह् + लट् + शतृ।

(32) स्थितिशालिसमस्तवर्णतां न कथं चित्रमयी बिभर्तु या।
स्वरभेदमुपैतु वा कथं कलिताऽनल्पमुखाऽऽरवा न वा ॥ 2/98

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण-पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में कुण्डिनपुरी के सौन्दर्य-वैभव का वर्णन किया गया है।

अर्थ एवं भावार्थ—कुण्डिनपुरी में आश्चर्यजनक ऊँचे तथा सुन्दर चित्रों से युक्त दीवारों वाले अनेक भवन हैं। वहाँ के ब्राह्मण भी मार्यादा का पालन करने वाले हैं। सभी वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि ठीक स्थान पर रहने वाले क्यों न हों। मनुष्य आदि के मुखों के शब्दों वाली जो नगरी स्वरों के भेद को प्राप्त करती थी तथा मुखों वाले यथा चतुर्मुख अर्थात् ब्रह्मा, पञ्चमुख अर्थात् महादेव, षण्मुख अर्थात् कार्तिकेय के शब्दों को प्राप्त कर के स्वर्ग से समानता करती थी।

छन्द-अलङ्कार—प्रकृत श्लोक में वियोगिनी छन्द है तथा पूर्वार्द्ध में अर्थापत्ति, शब्द श्लेष और प्रकृति श्लेष अलङ्कार है।

व्याख्या टिप्पणी—चित्रमयी = प्रचुरं चित्रमस्ति यस्याः सा

स्थितिशालि समस्तवर्णतां = नगर में सभी वर्ण अपनी अपनी मार्यादानुसार कर्त्तव्याधिकार का आचरण करते थे। साथ ही वहाँ के दीवारों के चित्रों में भली प्रकार से रंगों का प्रयोग किया गया था।

बिभर्तु = डुभृञ् + लोट् + तिप्।

(33) यदतिविमलनीवेशमरश्मिभ्रमरितभाः शुचिवस्त्रवल्लिः।
अलभत शमनस्वसुः शिशुत्वं दिवसकराऽङ्कतले चला लुठन्ती ॥

12/103

भूमिका—संस्कृत साहित्य में महाकवि श्रीहर्ष तथा 'नैषधीयचरितम्' को प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। इस काव्य में विद्वतापूर्ण, पाण्डित्यपूर्ण तथा शास्त्रोचित उक्तियों का बाहुल्य प्राप्त होता है। श्रीहर्ष विशुद्ध, विदग्ध पदावली के आदरणीय आचार्य हैं। 'वक्रोक्ति' के द्वारा सामान्य अर्थ की अभिव्यञ्जना कला के पूर्ण पण्डित हैं। उनके काव्य में श्लेष अनुप्रास अत्यन्त चमत्कारी हैं। विद्वत् समुदाय ने उनकी अतुलनीय प्रतिभा से प्रभावित होकर कहा है—

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे भानौ क्व माघः? क्व च भारविः? ॥

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में कुण्डिननगरी के सौन्दर्य-वैभव का वर्णन सुन्दर शब्दों में किया गया है।

अर्थ—जिस कुण्डिननगरी के अत्यन्त निर्मल नीलम के भवनों की किरणों से भ्रमर के समान नीली कान्ति वाली सफेद वस्त्र की पताका ने सूर्य की गोद में चञ्चल होकर लोट-पोट करती हुई यमुना की बाल्यावस्था को प्राप्त किया।

भावार्थ—यहाँ कवि ने बताया है कि कुण्डिननगरी में नीलम पत्थर से निर्मित भवन है जिससे नीली कान्ति निकल रही है। सूर्य की उज्ज्वल किरणें जब उस पर पड़ती हैं तो लगता है नीली जल वाली यमुना अपने पिता सूर्य की गोद में लोट-पोट कर रही है। अत्यन्त मनोरम तथा उदात्त कल्पना यहाँ कवि की अलौकिक बुद्धि तथा क्षमता का परिचय देती है।

अलङ्कार एवं छन्द—यहाँ पर उपमा, सादृश्य का आक्षेप होने से निदर्शना रूपक अलङ्कार है। यहाँ 'पुष्पिताग्रा' नामक छन्द है।

व्याख्या टिप्पणी—शुचिवस्त्रवल्लिः = वस्त्रम् एवं वल्लिः (रूपक)

लुठन्ती = लुठ + लट् (शतृ.) + ङीप्

अलभत = लभ् + लङ् + त।

॥ इति द्वितीय सर्ग व्याख्या ॥

तृतीय सर्ग

(34) आकुञ्चिताभ्यामथ पक्षतिभ्यां नभोविभागात्तरसाऽवतीर्य।
निवेशदेशाऽऽततधूतपक्षः पपात भूमावुपभैमि हंसः ॥ 3/1

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक 'नैषध' के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है।

प्रसंग—यह तृतीय सर्ग का प्रथम श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है। प्रकृत श्लोक में अद्भुत हंस के उतरने का स्वाभाविक वर्णन किया गया है।

अर्थ—हंस अवतरण काल में मण्डलाकार चक्कर लगाता हुआ अपने पंखों को सिकोड़ कर, वेगपूर्वक आकाश से नीचे उतरा। हंस अपने फैलाये हुए पंखों को फड़फड़ाता हुआ दमयन्ती के समीप आ बैठा।

अलङ्कार एवं छन्द—प्रकृत श्लोक में स्वाभावोक्ति अलङ्कार है। यहाँ प्रथम चरण में इन्द्रवज्रा और द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ चरण में उपेन्द्रवज्रा, अतः उपजाति छन्द है।

टिप्पणी—नभोविभागात् = नभसो विभागः तस्मात् (ष. प्र.).

अवतीर्य = अव तृ क्त्वा (ल्यप्)

उपभैमि = भैम्याः समीपे (अव्ययीभावसमास.)

पपात् = पात् + लिट् + तप्।

शब्दार्थ—अथ = (अनन्तर अर्थ में) मण्डलाकार परिभ्रमण के बाद
पक्षतिभ्याम् = दोनो पँखों से,
उपभैमि = भैमी के पास
अवतीर्य उतरकर, भूमौ = भूमि पर, पपात-गिरा।

(35) नेत्राणि वैदर्भसुतासखीनां विमुक्ततत्तद्विषयग्रहाणि।
प्रापुस्तमेकं निरुपाख्यरूपं ब्रह्मेव चेतांसि यतव्रतानाम्॥ 3/3

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का तृतीय श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—अद्भुत हंस के सौन्दर्य से अभिभूत हो दमयन्ती की सभी सखियाँ हंस को कौतुकवश देख रही हैं। इसका सुन्दर वर्णन कवि ने इस श्लोक में किया है।

अर्थ एवं भावार्थ—दमयन्ती की सखियों के नेत्रों ने उन-उन विषयों की आसक्ति को छोड़कर अकेले चलने वाले अनिर्वाच्य आकार वाले, उस हंस को, जैसे योगियों के चित्त अद्वितीय अनिवर्चनीय स्वरूप वाले और तत् पद के अर्थस्वरूप ब्रह्म को ग्रहण करते हैं, उसी तरह ग्रहण किया।

दमयन्ती की सखियों ने आदर मिश्रित नेत्रों से हंस को देखा।

अलङ्कार एवं छन्द—प्रकृत श्लोक में 'ब्रह्मश्व' पद में उपमा अलङ्कार है। इस श्लोक में इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा का सम्मिश्रण होने से उपजाति छन्द है।

टिप्पणी-शब्दार्थ—वैदर्भसुतासखोनां = विदर्भाणां राजा वैदर्भः तस्यसुता, तस्याः सखीनां।

निरुपाख्यं=निर्गता उपाख्या यस्मात्तत् निरुपाख्यं अर्थात् अनिर्वचनीय रूप वाले।
तम् = उस हंस को, ब्रह्म इव ब्रह्म के समान
प्रापुः = सादर प्राप्त हुए

(36) हंसं तनौ सन्निहितं चरन्तं मुनेर्मनोवृत्तिरिव स्विकायाम् ।
ग्रहीतुकामादरिणा शयेन यत्नादसौ निश्चलतां जगाहे ।। 3/4

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का चौथा श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में अद्भुत को देख दमयन्ती उसे पकड़ने का उद्योग करती है इसका सुन्दर वर्णन यहाँ प्राप्त होता है ।

सरलार्थ एवं भावार्थ—जिस प्रकार मुनि की मनोवृत्ति अपने शरीर के अन्तर्क्षेत्र में स्थित परमात्मा को आदरयुक्त चित्त से साक्षात्कार करने की इच्छा कर यत्नपूर्वक स्थिर होती है, वैसे ही दमयन्ती भी अपने शरीर के समीप स्थित और चलते हुए हंस को निर्भय हाथ से पकड़ने की इच्छा कर यत्नपूर्वक निश्चल हुई । दमयन्ती ने प्रयत्नवश शरीर की चञ्चलता पर काबू पा लिया परन्तु मन तो चञ्चल ही रहा ।

अलङ्कार एवं छन्द—प्रकृत श्लोक में श्लेष और उपमा का अङ्गाङ्गिभाव से सङ्कर अलङ्कार है । यहाँ भी उपजाति छन्द है ।

टिप्पणी-शब्दार्थ—मनोवृत्तिः—मनसो वृत्तिः (ष. त.)
सन्निहितं = सम् + नि + धा + क्त + अम्, सभी परस्थ ।
ग्रहीतुं = ग्रह + तुमुन्, पकड़ने के लिए
जगाहे = लिट् प्राप्त किया ।

(37) धृताऽल्पकोपा हसिते सखीनां छायेव भास्वन्तमभिप्रायतुः ।
श्यामाऽथ हंसस्य कराऽनवाप्तेर्मन्दाक्षलक्ष्या लगति स्म पश्चात्। 3/8

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग

का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का आठवाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—हंस को न पकड़ पाने पर दमयन्ती के मन के भावों का वर्णन कवि ने अत्यन्त कुशलता से किया है।

अर्थ— दमयन्ती ने अपनी सखियों को ताली बजाने से रोका तथा उन्हें उलाहना दिया। सखियाँ हंस से थोड़ा क्रुद्ध हुईं तथा हंस को हाथ से न पकड़ पाने के कारण कुछ लज्जा के भाव उसके मुख पर आये। सूर्य के सामने जाने वाली छाया के समान सूर्य की किरणों को न छू सकने के कारण लज्जायुक्त दृष्टि हंस को पकड़ने के लिए उसके पीछे चलने लगी।

अलङ्कार-छन्द—यहाँ अभीष्ट न पाने की स्थिति में मन में आने वाले भावों का सफलतापूर्वक चित्रण किया गया है। यहाँ 'छायेव श्यामा' में उपमा अलङ्कार है। इस श्लोक में उपजाति छन्द है।

टिप्पणी-शब्दार्थ—हसिते = हस् + क्त + ङि, हास्य के विषय में
भास्वन्तं = भास् + मतुप् + अम्, सूर्य के
हंसस्य = षष्ठी एकवचन, हंस के
कराऽनवाप्तेः = न अवाप्तिः नञ्, हाथ से नहीं पकड़ पाने से
पश्चात् = पीछे
लगति स्म = चल पड़ी

(38) अये ! कियद्यावदुपैषि दूरं व्यर्थं ? परिश्राम्यसि वा किमर्थम् ।
उदेति ते भीरपि किन्तु बाले ! विलोकयन्त्या न घना वनाऽऽली:।। 3/13

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का तेरहवाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

अर्थ—अकेली दमयन्ती को अपना पीछा करता देख हंस मनुष्य की वाणी में बोला। अरे बाले ! व्यर्थ कितनी दूर तक आ रही है ? किसलिए व्यर्थ परिश्रान्त होती है ? गाढ वनपङ्क्तियों को देखने वाली आपको भय नहीं होता क्या ?

छन्द–यहाँ उपजाति छन्द है।

टिप्पणी-शब्दार्थ—कियत् = किम् + वतुप्—कितनी

किमर्थं = किसलिए।

(39) स्वर्गाऽऽपगाहेममृणालिनीनां नालामृणालाऽग्रभुजो भुजामः।
अन्नाऽनुरूपां तनुरूपऋद्धिं कार्यं निदानाद्धि गुणानधीते ॥ 3/17

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का सतरहवाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में हंस ने दमयन्ती को अपने घूमने का कारण बताया है।

अर्थ—ब्रह्मा की आज्ञा से इस भूलोक में नल के क्रीड़ा सरोवर का सेवन करने के लिए आये हुए सुवर्णमय हंसों में से मैं अकेला भूलोक को देखने की इच्छा से घूम रहा हूँ।

छन्द—प्रकृत श्लोक में उपजाति छन्द है।

टिप्पणी-शब्दार्थ—नैषधीयं = नैषधस्य इदम्, नल के

हैमैषु = हेम्नोविकारः, स्वर्णमय

अहमेकमेव = अहम् + एकम् + एव, मैं अकेला ही

भ्रमामि = भ्रम, लट् उत्तम पु. एकवचन, घूम रहा हूँ।

(40) बन्धाय दिव्ये न तिरश्चि कश्चित्पाशादिरासादितपौरुषः स्यात्।
एकं विना मादृशि तन्नरस्य स्वर्भोगभाग्यं विरलोदयस्य ॥ 3/20

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्'

से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषधं की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का बीसवाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में हंस ने नल की विशिष्टताओं का वर्णन किया है। दमयन्ती के हंस ग्रहण के प्रयास को व्यर्थ बताया है।

अर्थ—मेरे समान दिव्य पक्षी के विषय में दुर्लभ जन्म वाले नर के अथवा 'र' के स्थान में 'ल' से युक्त नर अर्थात् नल के मुख्य स्वर्गभोग के भाग्य को छोड़कर कुछ पाश आदि उपाय बन्धन के लिए समर्थ नहीं होगा। तात्पर्य यह है कि मैं नल के अतिरिक्त किसी और से ग्राह्य नहीं हूँ।

छन्द—इस श्लोक में नल को विरल उदय वाला कहा गया है। यहाँ श्लेष अलङ्कार तथा उपजाति छन्द है।

टिप्पणी—विरलोदयस्य = विरल उदयो यस्य स विरलोदयः पशादिः = पाश आदिर्यस्य सः।

शब्दार्थ—तकेकं बिना = उस एक के बिना

(41) क्रियेत चेत्साधुविभक्तिचिन्ता, व्यक्तिस्तदा सा प्रथमाऽभिधेया।
या स्वौजसां साधयितुं विलासैस्तावत्क्षमानामपदं बहु स्यात्॥ 3/23

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन. दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का तेइसवाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में हंस द्वारा दमयन्ती के मन में नल के प्रति प्रेम उत्पन्न करने के लिए राजा नल के गुणों का वर्णन किया गया है।

अर्थ—यदि सज्जनों के विभाग का विचार किया जायेगा तो 'नल' नाम वाले व्यक्ति को पहले परिगणन करना चाहिए जो अपने प्रताप के वैभव से प्रचुर शत्रुओं के राष्ट्र को वश में करने के लिए समर्थ होगा ।

सात विभक्तियों का विचार किया जायेगा तो उस प्रथमा विभक्ति को पहले कहना चाहिए जो स औजस् इन प्रत्ययों के विस्तारों से बहुत से सुबन्त पदों को सिद्ध करने के लिए समर्थ होगी ।

अलङ्कार एवं छन्द—इस श्लोक में श्लेष अलङ्कार तथा उपजाति छन्द है ।

टिप्पणी—साधुविभक्तिचिन्ता = साधुनां विभक्तिः, तस्याश्चिन्ता, साधु विभक्ति चिन्ता ।

शब्दार्थ—साधुयितुम् = वश में करने के लिए

स्वौजसाम् = अपने पराक्रम से ।

(42) धिक् ! तं विधेः पाणिमजातलज्जं निर्माति यः पर्वणि पूर्णमिन्दुम् ।
मन्ये स विज्ञः स्मृततन्मुखश्रीः कृताऽर्धमौञ्झद्भवमूर्ध्नि यस्तम् ॥ 3/32

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का बतीसवाँ श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में हंस ने दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति आकर्षण उत्पन्न करने के लिए नल के अप्रतिम सौन्दर्य का वर्णन किया है ।

अर्थ एवं भावार्थ—ब्रह्मा के निर्लज्ज हाथ को धिक्कार है, जो पूर्णिमा में चन्द्र की रचना करता है तथा (ब्रह्मा के) उसको मैं निपुण मानता हूँ, नल के मुख की शोभा को स्मरण किये हुए जिसने उस चन्द्रमा को शिवजी के मस्तक पर फेंक दिया । वहीं बुद्धिमान है, मैं ऐसा मानता हूँ । तात्पर्य यह है कि यद्यपि पूर्ण कला वाले चन्द्रमा की रचना ब्रह्मा का जो हाथ करता है वह एक कला वाले चन्द्रमा की भी रचना करता है, तथापि तिथि रूप काल भेद से ब्रह्मा के हाथ में भिन्नता का आरोप किया गया है । नल का मुख पूर्ण चन्द्रमा से भी अधिक सुन्दर है ।

अलङ्कार-छन्द—यहाँ प्रतीप अलंङ्कार तथा उपजाति छन्द है।

टिप्पणी—स्मृततन्मुखश्रीः = तस्य मुखं (षष्ठी तत्पुरुष)

औज्झत् = उज्झ + लङ् + त, फेंक दिया

शब्दार्थ—कृताऽर्धं = कृतः अर्धः यस्य स कृताऽर्धः तमु (बहु.) अर्थात् एक कला वाले चन्द्रमा को

पाणिम् = हाथ को।

(43) यदि त्रिलोकी गणनापरा स्यात्तस्याः समाप्तिर्यदि नायुषः स्यात्।
पारेपरार्धं गणितं यदि स्याद्,गणेयनिःशेषगुणोऽपि सः स्यात्। 3/40

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का चालीसवाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में नल के गुणों का वर्णन किया गया है।

अर्थ—यदि तीनों लोक नल के गुणों को गिनने में तत्पर हों, यदि उनकी आयु की समाप्ति भी न हो और यदि परार्ध से ऊपर भी गणना हो सके तभी नल के सभी गुणों की गणना संभव है।

अलङ्कार-छन्द—यहाँ अतिशयोक्ति अलङ्कार तथा उपजाति छन्द है।

टिप्पणी—त्रिलोकी = त्रयाणां लोकानां समाहारः (द्विगु समास)।

शब्दार्थ—गणनापरा = गणना करने में तत्पर

आयुषः = आयु का

निःशेषा = सम्पूर्ण।

(44) नलाश्रयेण त्रिदिवोपभोगं तवाऽनवाप्यं लभते बतान्या।
कुमुद्वतीवेन्दुपरिग्रहेण ज्योत्स्नोत्सवं दुर्लभमम्बुजिन्या॥ 3/45

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्'

से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का पैतालिसवाँ श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में हंस राजा नल के अभीष्टसिद्धि के लिए दमयन्ती के हृदय नल के प्रति अनुराग का बीजारोपण करता है ।

अर्थ—जिस प्रकार चन्द्रमा के सम्बन्ध से कमलिनी के लिए दुष्प्राप्त चाँदनी का भोग कुमुदिनी करती है उसी प्रकार आपसे अप्राप्य दुर्लभ स्वर्ग भोग को नल के आश्रय से अन्य स्त्री प्राप्त करती है । हंस दमयंती को यह समझाना चाहता है कि तुम नल को स्वीकार कर दुर्लभ स्वर्ग भोग प्राप्त करो ।

अलङ्कार एवं छन्द—प्रकृत श्लोक में 'अम्बुजिन्या' तथा 'तव' में कुमुदवती 'अन्या' में सादृश्य वर्णन होने से उपमा अलङ्कार है । यहाँ उपजाति छन्द है ।

टिप्पणी—त्रिदिवोपभोगम् = त्रिदिवस्य उपभोगः तम् (ष. त.), स्वर्ग भोग को
ज्योत्स्नोत्सवं = ज्योत्स्नाया उत्सवः तम् (ष. त.), चाँदनी के उत्सव को ।

शब्दार्थ—इन्दुपरिग्रहेण = इन्दोः परिगहः तेन, चन्द्रमा के अङ्गीकार से
दुर्लभम् = दुर् + लभ्, खल् + अम्, कठिनाई हो प्राप्त, अप्राप्य
अन्या = अन्य स्त्री ।

(45) **आस्तां तदप्रस्तुतचिन्तयाऽलं, मयाऽसि तन्वि ! श्रमिताऽतिवेलम् ।**
सोऽहं तदागः परिमार्ष्टुकामस्तवेप्सितं किं विदधेऽभिधेहि । 3/52

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का बावनवं श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसङ्ग—हंस नल के गुणों का वर्णन करता है। साथ ही दमयन्ती के मन की इच्छा जानने के लिए उपर्युक्त श्लोक का कथन करता है।

अर्थ—अपनी बातों का उपसंहार करता हुआ हंस कहता है हे कृशोदरि ! नल वर्णन रूप अप्रासङ्गिक बात को छोड़ो। मैंने तुम्हें बहुत थकाया। उस अपराध का पश्चाताप करने के लिए मैं आपका कौन सा अभीष्ट कार्य करूँ। कहिए।

छन्द—प्रकृत श्लोक में उपजाति छन्द है।

टिप्पणी-शब्दार्थ—अप्रस्तुत चिन्तया = न प्रस्तुतः अप्रस्तुतः
नञ्—तत्पुरुष, अप्रस्तुत बात की चिन्तासे
मया = मेरे द्वारा, अस्मद्, तृतीया, एकवचन
श्रमिता = श्रम् + णिच् + क्त + टाप्, थकाई गई
विदधे = वि + धाञ् + लट् + इट्, करूँ
ईप्सितम् = आप् + सन् + क्त, चाहा हुआ।

(46) मनस्तु यं नोज्झति जातु, यातु मनोरथः कण्ठपथं कथं सः।
का नाम बाला द्विजराजपाणिग्रहाऽभिलाषं कथयेदभिज्ञा ।। ।3/59

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का उनसठवाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—हंस के द्वारा नल के गुणों का वर्णन सुनकर दमयन्ती के मन में नल से विवाह की इच्छा होती है, परन्तु लज्जावश वह कहने में संकोच कर रही है। यहाँ महाकवि हर्ष ने भारतीय परम्परा एवं संस्कृति का निर्वाह किया है।

अर्थ—मेरा (दमयन्ती का) चित्त जिस मनोरथ को कभी नहीं छोड़ता है वह मनोरथ कण्ठमार्ग को कैसे प्राप्त होगा ? विवेक वाली कौन सी स्त्री चन्द्रमा के पाणिग्रहण के इच्छा को प्रकट करेगी ? हे हंस ! विवेक वाली कौन सी स्त्री राजा के पाणिग्रहण के अभिलाषा को कहेगी ?

अलङ्कार-छन्द्—प्रकृत श्लोक में श्लेष अलङ्कार तथा दृष्टान्त अलङ्कार है। 'द्विजराज पाणिग्रहण में श्लेष' है। मनोरथ की अभिव्यक्ति के साथ बाला की अभिलाषा का प्रतिबिम्ब भाव होने से 'दृष्टान्त' अलङ्कार है। यह श्लोक उपजाति छन्द में आबद्ध है।

टिप्पणी—कण्ठपथँ = कण्ठस्य पन्थाः कण्ठपथः तम् (ष. त.)

कथयेत् = कथ + णिच् + विधि लिङ्ग + तिप्, कहती है।

शब्दार्थ—का नाम बाला = कौन सी युवती

अभिज्ञा = विवेकपूर्ण।

(47) वाचं तदीयां परिपीय मृद्वीं मृद्वीकया तुल्यरसां स हंसः।
तत्याज तोषं परपुष्टघुष्टे, घृणां च वीणाक्वणिते वितेने ॥ 3/60

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का साठवाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—प्रकृत श्लोक में दमयन्ती के 'मधुर स्वर' का वर्णन किया गया है।

अर्थ—हंस ने दमयन्ती की मधुर सरस अंगूर के समान वाणी को सुना। दमयन्ती की मधुर वाणी सुनकर हंस ने कोयल का कूकना सुनने में तथा वीणा के झंकार के सुनने से घृणा (का आभास) किया। तात्पर्य यह है कि दमयन्ती की वाणी कोयल के स्वर से तथा वीणा के झंकार से भी मधुर थी।

अलङ्कार एवं छन्द—यहाँ उपमानं के न्यूनत्व होने से व्यतिरेक अलङ्कार तथा उपजाति छन्द है।

टिप्पणी-शब्दार्थ—परिपीय = परि + पीङ् + क्त्वा (ल्यप). सुनकर

तत्याज = त्यज् + लिट् + तिप्, छोड़ दिया

वितेने = पि + तन् + लिट् + त।

तोषम् = सन्तोष को

वीणा क्वणिते च = और वीणा की झनकार में।

(48) इतीरिता पत्त्ररथेन तेन ह्रीणा च हृष्टा च बभाण भैमी ।
चेतो नलङ्कामयते मदीयं, नाऽन्यत्र कुत्रापि च साऽभिलाषम् ॥ 3/67

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का सड़सठवाँ श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसंग—हंस के द्वारा यह कहने पर कि मैं तुम्हारी असाध्य अभिलाषा को भी पूर्त्ति करने का सामर्थ्य रखता हूँ । यह सुन दमयन्ती अपनी अभिलाषा प्रकट करती है ।

अर्थ—उस हंस के द्वारा ऐसा कहने पर दमयन्ती नारी सुलभ लज्जाभाव तथा प्रसन्नता से युक्त होकर कहती है कि 'मेरा चित्त लङ्का नहीं जाता है', 'मेरा चित्त तो नल को चाहता है, अन्य किसी भी वस्तु में अभिलाषा नहीं करता है' ।

अलङ्कार एवं छन्द—यहाँ श्लेष अलङ्कार एवं उपजाति छन्द है ।

टिप्पणी-शब्दार्थ—हृष्टा = हृष + क्त + टाप्, प्रसन्न होती हुई
न कामयते = इच्छा नहीं है ।

(49) त्वच्चेतसः स्थैर्यविपर्ययं तु सम्भाव्य भाव्यस्मि तदज्ञ एव ।
लक्ष्ये हि बालाहृदि लोलशीले दराऽपराद्धेषुरपि स्मरः स्यात् । 3/70

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का सत्तरवाँ प्रथम श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसंग—दमयन्ती द्वारा यह कहने पर कि मेरा चित्त नल के अतिरिक्त किसी को नहीं चाहता, यह सुनकर हंस कहता है।

अर्थ एवं भावार्थ—'राजा के साथ पाणिग्रहण में स्पृहा' तथा 'मेरा चित्त नल की कामना करता है' ऐसे दो श्लोकों के अर्थ जान लेने पर भी आपके चित्त की अस्थिरता की आशङ्का करके मैं उस अर्थ में अनजान ही होने वाला हूँ। यतः चञ्चल स्वभाव वाली तरुणी के चित्त रूप लक्ष्य में कामदेव भी कुछ निशाना चूकने वाला होगा। इस श्लोक में स्त्रियों के चञ्चल स्वभाव का वर्णन किया गया है।

अलङ्कार—यहाँ सामान्य का विशेष के द्वारा समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है।

टिप्पणी-शब्दार्थ—त्वच्चेतसः = तव चेतः तस्य, (षष्ठी तत्पुरुष), तुम्हारे मन की

स्थैर्यविपर्ययं = स्थैर्यस्य विपर्ययः तम् ष. त, अस्थिरता की

लोलशीले = लोलं शीलं यस्य तत् तस्मिन्, चञ्चल स्वभाव वाले

स्मरः = कामदेव।

(50) तदेकदासीत्वपदादुदग्रे मदीप्सिते साधु विधित्सुता ते।
अहेलिना किं नलिनी विधत्ते सुधाऽऽकरेणाऽपि सुधाकरेण ॥ 3/80

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का अस्सीवाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—दमयन्ती नल के प्रति प्रेम में अपनी एकाग्रनिष्ठा का वर्णन करते हुए कहती है।

अर्थ—हे हंस ! नल के एक दासीत्वरूप अधिकार से अधिक मेरे अभीष्ट अर्थात् पत्नीत्व रूप विषय में तुम्हारी कार्य-सम्पादकता उचित है। जिस प्रकार कमलिनी अमृत के आधार होने पर भी सूर्य से भिन्न हो चन्द्र से क्या करती है ?

अलङ्कार-छन्द—यहाँ दृष्टान्त अलङ्कार तथा उपजाति छन्द है।
टिप्पणी-शब्दार्थ—मदीप्सिते = मम ईप्सितं, मेरा अभीष्ट
विधित्सुता = विधातुमिच्छुः
सुधाकरेण = सुधायाः आकारः तेन (चन्द्रमा)

(51) दत्त्वात्मजीवं त्वयि जीवदेऽपि शुध्यामि, जीवाऽधिकदे तु केन? ।
विधेहि तन्मां त्वदृणेष्वशोद्धुममुद्रदारिद्र्यसमुद्रमग्नाम् ।। 3/86

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का छियासीवाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—दमयन्ती हंस से राजा नल के प्रति अपना प्रेम प्रकट करते हुए कहती है।

अर्थ—तुम्हें जीवदान प्राप्त करने पर मैं अपना जीवन दान करके भी शुद्ध ऋणहीन हो सकती हूँ किन्तु जीव से अधिक (नल) के देने पर मैं तुम्हारे लिए क्या देकर ऋण होऊँगी। इस कारण तुम अपने ऋण को नहीं चुकाने के लिए मुझे अपरिमित दारिद्र्यरूपी समुद्र में मग्न कर दो। मेरे जीवन से भी अधिक नल को मुझे देकर सदा के लिए ऋणी बना लो।

अलङ्कार-छन्द—यहाँ विरोधाभास तथा रूपक अलङ्कार तथा उपजाति छन्द है।
टिप्पणीं-शब्दार्थ—जीवदे = जीव + दा + क + ङि, जीवन दान देने वाले
दत्वापि = दा + क्त्वा, देकर भी
शुद्ध्यामि = शुध् + लट् + मिप्, शुद्ध हो सकती है।
केन = किससे, किम् पु. तृतीया एकवचन।

(52) अलं विलम्ब्य त्वरितुं हि वेला, कार्ये किल स्थैर्यसहे विचारः ।
गुरूप्रदेशं प्रतिमेव तीक्ष्णा प्रतीक्षते जातु न कालमर्तिः ।। 3/91

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्'

से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का एकानवेंवाँ श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसंग—नल के प्रति आसक्त दमयन्ती राजा से अपने मिलन को शीघ्र कराने हेतु हंस को शीघ्रता करने को कहती है ।

अर्थ—हे हंस ! विलम्ब नहीं करना चाहिए, यह समय शीघ्रता करने का है । विलम्ब सहने वाले कर्म में विचार किया जाता है, क्योंकि तीक्ष्ण बुद्धि जिस प्रकार गुरु के उपदेश की प्रतीक्षा नहीं करती है, वैसे ही पीड़ा काल की प्रतीक्षा नहीं करती है ।

अलङ्कार—यहाँ उपमा तथा अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है ।

टिप्पणी—विलम्ब्य = वि + लबि + क्त्वा ल्यप्

त्वरितुं = त्वरा + तुमुन्

गुरुपदेशं = गुरोः उपदेशः तम् (ष. त.)

प्रतीक्षते = प्रति + ईक्ष + लट् + तिप् ।

(53) विज्ञेन विज्ञाप्यमिदं नरेन्द्रे तस्मात्त्वयाऽस्मिन्समयं समीक्ष्य ।
आत्यन्तिकाऽसिद्धिविलम्बसिद्ध्योः कार्यस्य काऽऽर्यस्य शुभा विभाति?

3/96

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का छियानवेवाँ श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसङ्ग-पूर्ववत् ।

अर्थ–हे हंस ! इस कारण से विद्वान् आप इस राजा से उपयुक्त अवसर देखकर इस कार्य को राजा से निवेदन करना चाहिए। कार्य की ऐकान्तिक असफलता और विलम्ब से सफलता इनमें से विद्वान् तुम्हें कौन-सी उत्तम प्रतीत होती है।

टिप्पणी-शब्दार्थ–विज्ञेन = वि + ज्ञा + क + टा, विवेकशील

त्वया = तुम्हे

समयम् = अवसर को

समीक्ष्य = देखकर

विज्ञाप्यम् = निवेदन करना चाहिए।

(54) तुल्याऽऽवयोर्मूर्तिरभून्मदीया दग्धा परं साऽस्य न ताप्यतेऽपि।
इत्यभ्यसूयन्निव देहतापं तस्याऽतनुस्त्वद्विरहाद्विधत्ते ॥ 3/102

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का 102वाँ है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसंग—हंस नल के प्रेमानुराग का वर्णन करते हुए दमयन्ती से कहता है।

अर्थ—हे राजकुमारी ! हम दोनों के अर्थात् नल और मेरे शरीर में समान थे, परन्तु मेरा शरीर जलाया गया, नल का शरीर ताप को भी प्राप्त नहीं कर रहा है, इस कारण से मानों ईर्ष्या करता हुआ कामदेव आपके वियोग से नल के शरीर में ताप कर रहा है।

अलङ्कार—यहाँ उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

टिप्पणी-शब्दार्थ—अवायोः = अहं च नलश्च आवां तयोः अर्थात् मेरा और नल का शरीर

दग्धा = दह् + क्त + टाप्

ताप्यते = तप + णिच् + लट्

देहतापं = देहस्य तापः।

(55) लिपिं दृशा भित्तिविभूषणं त्वां नृपः पिबन्नादरनिर्निमेषम् ।
चक्षुर्जलैरार्जितमात्मचक्षूरागं स धत्ते रचितं त्वया नु ।। 3/103

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का 103वाँ श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसङ्ग—पूर्ववत् ।

अर्थ—वह राजा नल दीवार पर अलंकृत चित्र रूप तुमको दृष्टि से आदर पूर्वक एकटक देखता हुआ, आँसुओं से उत्पन्न, मानों तुम्हारे द्वारा रचित अपने नेत्रों में लालिमा को धारण करता है ।

अलङ्कार—इस पद्य में 'त्वयानुरचितम्' में उत्प्रेक्षालङ्कार है । इस पद्य में राजा के नेत्र का राग निर्निमेष दृष्टि से देखने से हुआ है अथवा आप से रचित है, ऐसा सन्देह होने से सन्देह अलङ्कार है ।

टिप्पणी-शब्दार्थ—पिबन् = पा + लट् + सु, देखता हुआ
त्वाम् = तुमको
धत्ते = धा + लट् +त ।
रचितम् = रचित,
त्वया नु = मानों तुम्हारे द्वारा ।

(56) त्वत्प्रापकात् त्रस्यति नैनसोऽपि, त्वय्येव दास्येऽपि न लज्जते यत् ।
स्मरेण बाणैरतितक्ष्य तीक्ष्णैर्लूनाः स्वभावोऽपि कियान् किमस्य?। 110

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध

की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का 110वाँ श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसंग—हंस नल की प्रेमावस्था का वर्णन कर रहा है ।

अर्थ—हे राजकुमारी ! कामदेव ने तीखे वाणों से अत्यन्त भेदन कर नल के स्वभाव को भी कुछ छिन्न कर दिया है क्या? जो कि नल आपको पाने के साधनभूत पाप से भी नहीं डरते हैं तथा आपके दासभाव में भी लज्जा अनुभव नहीं कर रहे हैं ।

प्रकृत श्लोक में कवि ने नल के उत्कृष्ट प्रेम का वर्णन किया है । प्रेम में घनिष्ठता होने पर व्यक्ति का स्वाभिमान समाप्त हो जाता है ।

टिप्पणी-शब्दार्थ—अस्य = राजा नल के

लूनाः = लूञ् + क्त + सु

दास्येऽपि = दास कर्म में भी

न लज्जते = लज्जित नहीं होता ।

(57) धन्याऽसि वैदर्भि ! गुणैरुदारैर्यया समाकृष्यत नैषधोऽपि ।
इतः स्तुतिः का खलु चन्द्रिकाया यदब्धिमप्युत्तरली करोति ।3/115

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का 115वाँ श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

अर्थ—हंस राजकुमारी दमयन्ती की प्रशंसा करता है । हे दमयन्ती तुम धन्य हो जिन उदार गुणों के कारण नल को भी आपने आकृष्ट कर लिया है । जो चन्द्रिका समुद्र को भी क्षुब्ध कर देती है इससे अधिक चाँदनी की क्या प्रंशसा की जा सकती है ।

अलङ्कार—यहाँ दृष्टान्त अलङ्कार है । साहित्यदर्पण के अनुसार यहाँ प्रतिवस्तूपमा अलङ्कार है ।

टिप्पणी-शब्दार्थ—
वैदर्भि = विदर्भ+ अण् + ङप् + सु, हे दमयन्ती
समाकृष्यत = सम् + आङ् + कृष + लङ् + त, आकृष्ट कर लिया
उत्तरलीकरोति—चञ्चल करती है।
चन्द्रिका—जो चाँदनी
अब्धिमपि—समुद्र को भी।

(58) नलेन भाया: शशिना निशेव त्वया स भायान्निशया शशीव।
पुनः पुनस्तद्युगयुग् विधाता स्वप्यासमास्ते नु युवां युयुक्षुः। 3/117

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का 117वाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग— हंस दमयन्ती से अपना अभिप्राय प्रकट कर देता है। नल के द्वारा भेजा गया मैं अपने कार्य में सफल हो गया हूँ। पुनः अपनी शुभकामना व्यक्त करते हुए कहता है।

अर्थ—हे राजकुमारी ! चन्द्र के साथ रात्रि के समान आप नल से शोभित हो। नल भी रात्रि के साथ चन्द्र के समान आप से सुशोभित हो। इस प्रकार बारम्बर रात्रि और चन्द्र की जोड़ी को मिलाने वाले ब्रह्माजी आप दोनों को भी मिलाने की इच्छा करते हुए निरंतर अभ्यास बढ़ाने में तत्पर रहते हैं क्या?

अलङ्कार—इस पद्य में अन्योन्य अलङ्कार, दो उपमाएँ और उत्प्रेक्षा इनका सङ्कर हैं।

टिप्पणी-शब्दार्थ—भाया: = 'भा दीप्तौ', शोभित हो
आस्ते = आस् + लट् + त, रहते हैं
युयुक्षु = युज् + सन् + उः, मिलाने की इच्छा करते हुए।

(59) अन्योऽन्यसङ्गमवशादधुना विभातां,
तस्याऽपितेऽपि मनसी विकसद्विलासे ।
स्रष्टुं पुनर्मनसिजस्य तनु प्रवृत्तमादाविव
द्व्यणुककृत् परमाणुयुग्मम् ॥ 3/125

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है । यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है । प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है । यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है । यह तृतीय सर्ग का 125वाँ श्लोक है । इसमें हंस अवतरण का वर्णन है ।

प्रसंग—हंस नल दमयन्ती के जोड़े के लिए शुभकामना देता है ।

अर्थ—हे दमयन्ती ! इस समय परस्पर में संयोग होने से विकसित विलास वाले नल के और आपके मन आरम्भ में द्व्यणुक बनाने वाले दो परमाणुओं के समान कामदेव के शरीर को पुनः उत्पन्न कर शोभित हो ।

भावार्थ—प्रकृत श्लोक में महाकवि ने अत्यन्त कुशलता से न्यायशास्त्र के सिद्धान्त का उद्धरण दिया है । न्यायशास्त्रानुसार जिस प्रकार सक्रिय दो परमाणुओं से द्व्यणुक उत्पन्न होता है, उसी तरह आप दोनों के मन भी मिलकर विलासपूर्ण होकर कामदेव के शरीर को उत्पन्न करें । यहाँ नल दमयन्ती के लिए पुत्र की कामना की गई है ।

अलङ्कार-छन्द—प्रकृत श्लोक में उत्प्रेक्षा अलङ्कार तथा वसन्ततिलका वृत्त है ।

टिप्पणी-शब्दार्थ—अधुना = अब

अन्योऽन्यसङ्गमवशात् = नल दमयन्ती के संयोग से
परस्पर एक दूसरे से मिलने से

मनसिजस्य = कामेदव के

आदौ = पूर्व समय में

स्रष्टु = सृज + तुमुन्

विभातां—वि + भा + लोट्

विकसद्विलासे = 'विकसन् विलासो ययोस्ते' ।

(60) अस्तित्वं कार्यसिद्धेः स्फुटमथ कथयन्पक्षयोः कम्पभेदै-
राख्यातुं वृत्तमेतन्निषधनरपतौ सर्वमेकः प्रतस्थे।
कान्तारे निर्गताऽसि प्रियसखि ! पदवी विस्मृता किं नु मुग्धे !
मा रोदीरेहि यामेत्युपहृतवचसो निन्युरन्यां वयस्याः ॥ 3/132

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्' से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का 132वाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—हंस अपने अभीष्ट अर्थात् राजा नल के प्रेम का अङ्कुर दमयन्ती के हृदय में आरोपित करने में सफल हो जाता है। इस श्लोक में हंस के नल के पास प्रस्थान का वर्णन किया गया है।

अर्थ एवं भावार्थ—दमयन्ती से वार्तालाप के अनन्तर हंस ने पंखों की कम्परूप चेष्टाओं से कार्य-साफल्य की सत्ता को स्पष्ट रूप से जताकर यह सब व्यतीत संभाषण रूप वृतान्त को महाराज नल को कहने के लिए प्रस्थान किया। हंस के जाने के उपरान्त दमयन्ती को उनकी सखियाँ 'हे प्रियसखि ! हे मूढ़चित्त वाली आप दुर्गम मार्ग में निकली है रास्ता भूल गई है क्या?' मत रोइए, आइए चलें, इस प्रकार समझाती हुए दमयन्ती के राजप्रासाद में ले गई।

टिप्पणी-शब्दार्थ—कम्पभेदैः = कम्पस्य भेदाः तैः कम्परूप, चेष्टाओं के द्वारा
कथयन् = कथ् + णिच् + लट् (शतृ) + सु, कहते हुए
विस्मृता = वि + स्मृ + क्त + टाप् + सु, भूल गई।

(61) परवति दमयन्ति ! त्वां न किञ्चिद्वदामि
द्रुतमुपनम किं मामाह सा ? शंस हंस !।
इति वदति नलेऽसौ तच्छशंसोपनम्रः
प्रियमनु सुकृतां हि स्वस्पृहाया विलम्बः ॥ 3/134

भूमिका—प्रकृत श्लोक संस्कृत साहित्य निधि के श्रेष्ठ रत्न 'नैषधीयचरितम्'

से लिया गया है। यह श्लोक नैषध के तृतीय सर्ग से संकलित है। प्रकृत सर्ग में हंस का दमयन्ती के समीप अवतरण, नल के गुणों का हंस द्वारा मनुष्यवाणी में वर्णन, नल द्वारा प्रदत्त संदेश का कथन, दमयन्ती के हृदय में नल के प्रति प्रेमानुराग का बीज वपन आदि प्रसंगों का कुशलता से वर्णन किया गया है। यह सर्ग नैषध की कथावस्तु को सशक्त बनाने वाला है। यह तृतीय सर्ग का 134वाँ श्लोक है। इसमें हंस अवतरण का वर्णन है।

प्रसङ्ग—राजा की प्रेमविह्वलता का वर्णन किया-गया है। हंस के जाने पर राजा व्यग्रता से उसके आगमन की प्रतीक्षा कर रहा है।

अर्थ—हे पराधीन दमयन्ती ! मैं तुम्हें कुछ नहीं कहता हूँ। हे हंस ! तुम शीघ्र मेरे पास आओ। दमयन्ती ने मेरे लिए क्या सन्देश दिया कहो ! ऐसा नल के द्वारा कहे जाने पर हंस ने राजा के निकट आकर सारा वृत्तान्त बताया, क्योंकि पुण्यात्माओं को अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति के लिए इच्छा मात्र का ही विलम्ब होता है अर्थात् इच्छा प्राप्त होने पर शीघ्र ही अभीष्ट की पूर्ति हो जाती है।

अलंकार-छन्द—इस पद्य में सामान्य से विशेष का समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है। यहाँ मालिनी छन्द है।

टिप्पणी-शब्दार्थ—परवति = पर + मतुप् + ङीप्

वदामि = वद् + लट् (शतृ) + ङि

स्वस्पृहायाः = स्वस्य स्पृहा तस्याः, ष. त.

सुकृतां —पुण्यात्माओं को।

मनोरमा-रत्नविमर्शः । केशवदेव तिवारी । (१-२ भाग)
महाभाष्यनवाह्निकीयालोचनम् । (नवाह्निक-प्रश्नोत्तरी) विजयमित्र शास्त्री
मालविकाग्निमित्र-रहस्यम् । डॉ. बालगोविन्द झा
मीमांसापरिभाषा सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
मुक्तावली-प्रकाश । (न्यायसिद्धान्तमुक्तावली-प्रश्नो.) राजेन्द्रप्रसाद कोठ्यारी
मुद्राराक्षस-विवेकः । लोकमणि दाहाल
मृच्छकटिक-सोपानम् । डॉ. नरेश झा
मेघदूत-तत्वालोकः । अशोकचन्द्र गौड़ शास्त्री
रघुवंश-रहस्यम् । रामप्रसाद त्रिपाठी । १-३ सर्ग, ६-७ सर्ग, १३-१४ सर्ग
रत्नावलीनाटिका सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
रसगङ्गाधर-सारः । डॉ. नरेश झा
लघुशब्देन्दुशेखर-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
लघुसिद्धान्तकौमुदी-चन्द्रिका । आचार्य विजयमित्र शास्त्री
वक्रोक्तिजीवित-दीपिका । डॉ. नरेश झा
वाक्यपदीय-प्रकाशिका । (ब्रह्मकाण्ड) । डॉ. सुरेशचन्द्र शर्मा
वासवदत्ता-रहस्यम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
वेणीसंहार-रहस्यम् । पं. परमेश्वरदीन पाण्डेय
वेदान्तपरिभाषा-सौरभम् । आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी
वेदान्तसार-प्रदीपः । श्री राजेन्द्रप्रसाद कोठ्यारी
वैदिकसाहित्येतिहास-सोपानम् । डॉ. शिवप्रसाद द्विवेदी
वैयाकरणभूषणसार-दीपिका । श्री रामकिशोर त्रिपाठी
वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी-चन्द्रिका । शास्त्री एवं त्रिपाठी । (१-४ खण्ड) सम्पूर्ण
वैयाकरणसिद्धान्तलघुमञ्जूषा-रहस्यम् । स्वामी रामेश्वर पुरी
वृत्तरत्नाकर-दीपिका । पं. वेदव्यास शुक्ल
व्यक्तिविवेकप्रश्नोत्तरीः । (१-२ विमर्श) कोठ्यारी एवं द्विवेदी
व्याकरणशास्त्रस्येतिहासः । डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
शाकुन्तल-रहस्यम् । त्रिलोकीनाथ द्विवेदी
शिवराजविजय-दीपिका । पं. वेदव्यास शुक्ल । प्रथम विराम
शिशुपालवध-रहस्यम् । श्री अशोकचन्द्र गौड़ शास्त्री । १-४ सर्ग
संस्कृतसाहित्येतिहास-कुञ्जिका । आचार्य परमानन्द शास्त्री
सांख्यकारिकादर्शः । राजेन्द्रप्रसाद कोठ्यारी
साहित्यदर्पणालोकः । रामजीलाल शर्मा । (१-६ परि.; ७-१० परि.) सम्पूर्ण
साहित्यशास्त्रीयोनिबन्धेतिहासः । वेदव्यास शुक्ल ।
सिन्धुवादवृत्त-रहस्यम् । डॉ कृष्णदेव प्रसाद
स्वरवैदिकी-प्रकाशः । डॉ. बालगोविन्द झा

भारतवर्ष के प्रायः सभी विश्वविद्यालयों
(सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी;
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, दिल्ली;
जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय, पुरी;
अवधेशप्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा;
पूर्वाञ्चल विश्वविद्यालय, जौनपुर;
गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर इत्यादि)
एवं
समस्त संस्कृत शिक्षा-संस्थानों के परीक्षा पाठ्य-क्रम में निर्धारित पाठ्य-पुस्तकें एवं प्रश्नोत्तरियाँ निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैं—

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
के. 37/117 गोपालमन्दिर लेन
पो. बा. नं. 1129
वाराणसी-221001
दूरभाष : 335263, 333431

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान
38 यू. ए. बंगलो रोड, जवाहर नगर
पो. बा. नं. 2113
दिल्ली-110007
दूरभाष : 23956391

चौखम्बा विद्याभवन
चौक (बनारस स्टेट बैंक भवन के पीछे)
पो. बा. नं. 1069
वाराणसी-221001
दूरभाष : 320404